षड्यंत्र

भारत विखंडन का

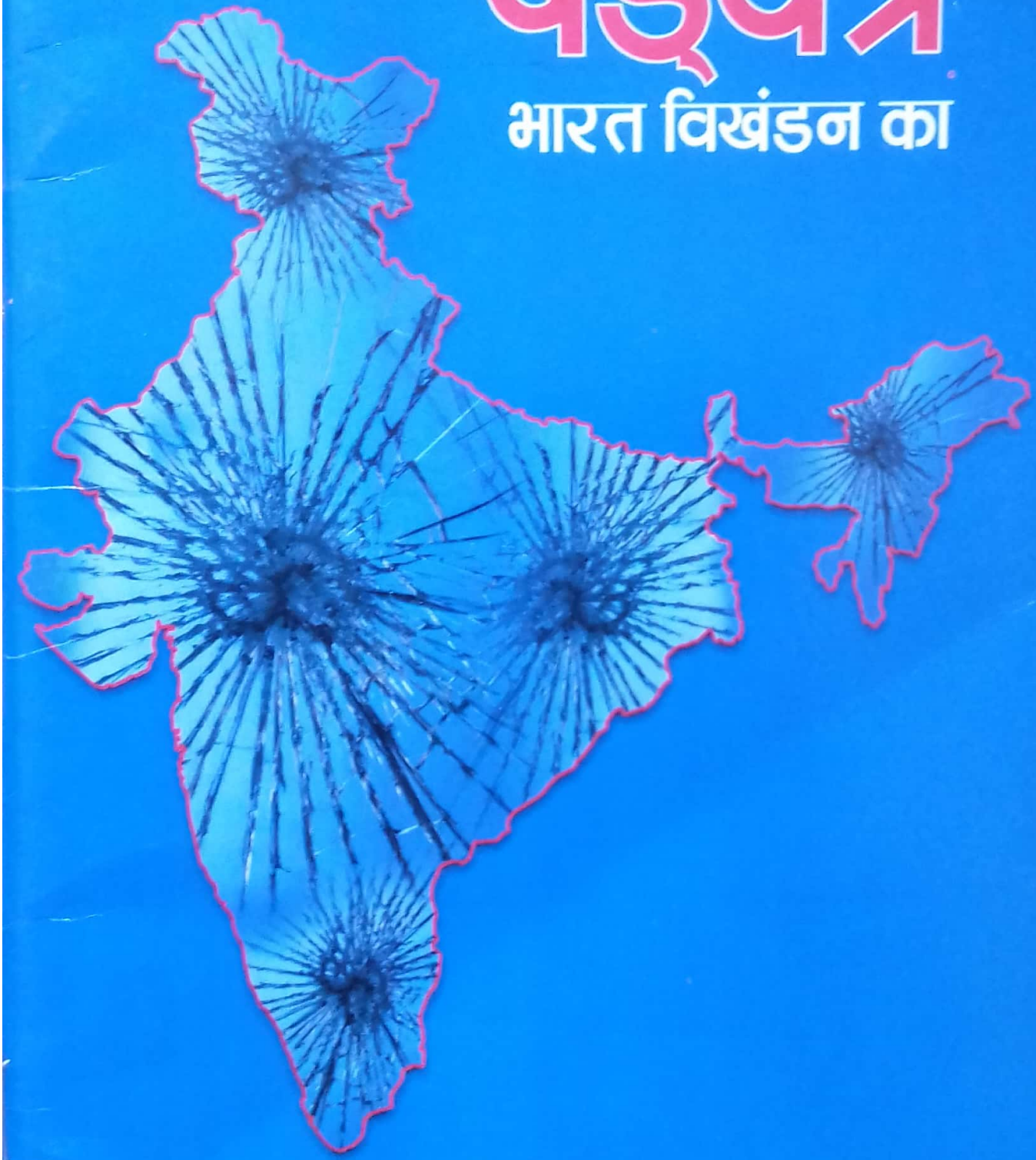

राजीव मल्होत्रा व अरविन्दन नीलकंदन द्वारा लिखित
एवं Amaryclis द्वारा प्रकाशित 'Breaking India'
में उठाए गए मुद्दों पर आधारित

मोरेश्वर जोशी

Scanned by CamScanner

भारत विभाजक गठजोड़ों की अंदरखाने मिलीभगत का खुलासा

षड्यंत्र - भारत विखंडन का

मोरेश्वर जोशी

विमर्श प्रकाशन
नई दिल्ली - 110005

Scanned by CamScanner

तीन आतंकी संगठनों का परिचय करवाने वाली किताब

षड्यंत्र- भारत विखंडन का

लेखक : **मोरेश्वर जोशी**

प्रकाशक :
विमर्श प्रकाशन
टी - 2263, भूतल, अशोका पहाड़ी
फैज़ रोड, करोल बाग, नई दिल्ली - 110005
दूरभाष : 011-28754271, 28751693
E-mail : vimarshprakashan@gmail.com

ISBN : 978-81-935032-0-1

प्रथम संस्करण : अगस्त, 2017

मूल्य : ₹ 20.00

प्रिंटर : एम.के. प्रिंटर्स, दिल्ली -7

Scanned by CamScanner

प्रस्तावना

भारत में परस्पर विरोधी मतों वाले उग्रवादी संगठन आपसी सहयोग से काम करते हैं, इस सच्चाई के कई प्रमाण दिखाने वाली पुस्तक 'ब्रेकिंग इंडिया' जब छह वर्ष पूर्व सर्वप्रथम प्रकाशित हुई थी, तब वह काफी नवीनतायुक्त थी। छह वर्ष पूर्व का वह समय ऐसा था, कि उन उग्रवादी संगठनों ने भारत के कुछ सत्ताधीश राजनैतिक दलों का आसरा लेकर काम जारी रखा था। इसलिए देश का भविष्य खतरे में आ चुका था। उत्तर में कश्मीर और पूर्वोत्तर में आसाम इन राज्यों के आसपास पहले-पहल शुरू होने वाले उग्रवादी हमले देश के हर एक राज्य में फैलने लगे थे। देश में हर एक आस्था का स्थान, हर एक औद्योगिक बस्ती, हर एक संचार स्थल अथवा हर एक सहकारी सोसायटी में हर स्थान पर सरकारी अथवा निजी पहरे बिठाए गए थे। स्थिति ऐसी बन गई थी, कि किसी भी मंदिर में जाने के लिए पहले जांच होती थी, बाद में कांच से दर्शन किया जाता था। राह में चलना भी असुरक्षित हो गया था। मई 2014 में भारत में सत्ता परिवर्तन हुआ और स्थिति प्रतिदिन बदलने लगी। ऐसा बिल्कुल नहीं, कि अब वे सारे खतरे समाप्त हो चुके हैं लेकिन उनकी संख्या नाममात्र स्तर तक नीची आई है। ऐसा नहीं, कि जिन्हें इस देश पर एक हजार से अधिक वर्षों तक हमले करने का चस्का लगा है, उनकी नीयत शीघ्र ही बदलेगी। आज भी वे उग्रवादी संगठित रूप से काम कर रहे हैं, यही दिखता है। जब तक उस हर एक उग्रवादी संगठन का स्वतंत्र तथा मिल-जुलकर राष्ट्रद्रोही प्रचार जारी है, तब तक देश के हर एक नागरिक को सचेत एवं कृतिशील होना आवश्यक है। इसलिए छह वर्ष पूर्व लिखी गई पुस्तक 'ब्रेकिंग इंडिया' आज भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण है। जिहादी संगठन, माओवादी कार्रवाईयां और उन्हें एकत्र लाने वाले चर्च संगठन इन सबकी षडयंत्रकारी कारगुजारियां कहां एवं कैसे चलती हैं, इस पर तीखी नजर रखनी होगी। इसमें आम नागरिकों को भी उन पर नजर रखनी पड़ेगी।

मुझे यह पुस्तक सर्वप्रथम सन् 2013 में मिली। इसके पहले एक-दो पठन काफी कठिन रहे। भाषा की प्रकांडता और अर्थपूर्णता व्यापक थी। इसलिए कुछ समय तक मैंने उसे पढ़ना भी छोड़ दिया था। लेकिन पुनः प्रतिदिन केवल एक या दो पैराग्राफ पढ़ने का निश्चय किया और विषय की जानकारी ली। इस विषय पर पहले मैंने मराठी में 10-12 लेख लिखे। उसे पाठकों से अच्छा प्रतिसाद मिला। इस लेखन के विषय को देखते हुए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

Scanned by CamScanner

के अखिल भारतीय प्रचार प्रमुख डॉ. मनमोहन जी वैद्य ने हिंदी के राष्ट्रीय साप्ताहिक 'पाञ्चजन्य' में इसका लेखन करने का सुझाव दिया। 'पांचजन्य' संपादक श्री हितेशजी शंकर ने यह विषय पढ़कर और उसका त्वरित आकलन करते हुए उसके संबंध में लेख कैसे हो, इसका मार्गदर्शन भी किया। 'ब्रेकिंग इंडिया' पुस्तक से एक-एक विषय और कुछ ताजा घटनाओं के संदर्भ लेकर लगभग 50 लेखों में यह विषय प्रस्तुत किया। बाद में भी एक वर्ष तक भारत एवं भारत से बाहर घटित होने वाली कुछ घटनाओं पर विचार करते हुए ध्यान में आया, कि इस पुस्तक के कुछ महत्त्वपूर्ण संदर्भ प्रतीत हो रहे हैं। इसलिए उन घटनाओं के प्रकाश में पुस्तक के कुछ विषयों पर पुनः लेखन किया। इसी सिलसिले में कुछ भाषण भी किए। इस पुस्तक के लेखक डॉ. राजीव मल्होत्रा और डॉ. अरविंदन नीलकंदन द्वारा पुस्तक पर लेखन एवं टिप्पणी करने की अनुमति देने के कारण यह संभव हुआ।

'ब्रेकिंग इंडिया' पुस्तक की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है, कि आम व्यक्ति भी उससे बोध प्राप्त कर सकता है। इन उग्रवादी संगठनों ने देश के अहम राजनैतिक दलों को भी साथ में ले लिया है। कई बार लगता है, कि परस्पर विरोधी मतों वाले उग्रवादी संगठन जिस तरह इस देश में एक-दूसरे के सहयोग से बरताव करते हैं उसी तरह उन्हें समर्थन देने वाले परस्पर विरोधी मतों वाले राजनैतिक दल भी आपसी सहयोग करते हैं, उन सब पर इस पुस्तक का उपयोग होगा।

इस पुस्तक की और एक विशेषता यह है, कि इस देश में उग्रवादी हमलों को सुगठित करने वाली शक्तियों की एक बड़ी यंत्रणा पर इस पुस्तक ने रोशनी डाली है। इस देश पर पिछली दो सदियों तक मुख्यतया ब्रिटिशों का वर्चस्व था। इस देश में कभी भी एकात्मता न बने, इसके लिए उन्होंने जो जहर घोल रखा है, वह सहजता से निकलने वाला नहीं है। इस देश की कानून और व्यवस्था, प्रशासन और शिक्षा आदि सब उनके हाथ में होने के कारण उन्होंने उसे फैलाया। इस देश में उग्रवादी हमले समाप्त हुए तो भी जो विष यूरोपीय लोगों ने घोल रखा है, उससे इस देश का आसानी से छुटकारा होने वाला नहीं है। लेकिन ऐसे विषय पर इस पुस्तक में रोशनी डाली गई है। मुख्य रूप से यूरोपीय लोगों ने जो 'भारत में आर्य बाहर से आए' यह सिद्धांत भारत पर थोपा था, उसका उत्तर इस पुस्तक ने दिया है। सोलहवीं सदी में लूट के लिए पूरे विश्व में जाने वाले यूरोपीय लोगों ने विश्व से लाई हुई लूट को 200 वर्षों तक खाने के बाद उन्हें लगने लगा, कि पूरे विश्व का इतिहास यूरोप से

Scanned by CamScanner

ही शुरू हुआ जिसे हमें लिखना होगा। बाइबल की एक कथा के द्वारा उन्होंने वह लिखा और आज भी विश्व के कई विश्वविद्यालयों में वही सिखाया जा रहा है। लेकिन इससे केवल भारत का ही इतिहास बदला, ऐसा नहीं था। यूरोपीय वर्चस्व के अधीन सभी औपनिवेशिक देशों का इतिहास उन्होंने बदल डाला। यूरोपीय वर्चस्व के अधीन अधिकांश देशों ने अब वह इतिहास बदलना शुरू किया है। चूंकि वह इतिहास ही झूठा है इसलिए पूरे विश्व में वह कदम-कदम पर झूठा भी साबित हो रहा है। लेकिन 200 वर्षों तक आरोपित किया गया वह झूठा इतिहास अपने आप नहीं बदल सकता। उसके लिए सारे देश को खड़े रहना पड़ता है जिसके लिए इस पुस्तक की मदद हो सकेगी।

छह वर्ष पूर्व सर्वप्रथम यह पुस्तक आई थी, उस समय विश्व की जो स्थिति थी वह अब काफी बदल चुकी है। भारत की स्थिति भी बदल चुकी है। महासत्ताओं का स्वरूप भी बदल रहा है और उन्नति के मानदंड भी बदल रहे हैं। इसलिए कुछ विषयों पर केवल भारत में माहौल बनाकर बात नहीं बनेगी बल्कि पूरे विश्व को जागृत एवं संगठित करना होगा। इस दृष्टि से यह पुस्तक उपयोगी होगी। मूल पुस्तक 600 पन्नों की है। ऐसी पुस्तकों का आम पाठकों तक पहुंचना तथा उनके द्वारा उन्हें पढ़ना हमारे यहां कम ही होता है। इसलिए उस मूल विषय का अनुमान हो तथा उसकी गंभीरता पता चले, इसलिए यह अत्यंत छोटी पुस्तिका बनाई है।

-मोरेश्वर जोशी

Scanned by CamScanner

षड्यंत्र उजागर

आतंक और अराजकता के जुड़ते तारों का चौंकाने वाला खुलासा

पिछले कुछ समय से नजर आ रही तस्वीर से जाहिर है कि विभिन्न विचारधाराओं वाले आतंकी संगठन एकजुट होकर देशविरोधी गतिविधियों में लिप्त हैं। हालांकि उनका यह प्रयास काफी पुराना है, लेकिन किसी विश्वविद्यालय में 'देश की बर्बादी तक लड़ेंगे' या कहीं स्वतंत्रता दिवस पर राष्ट्रध्वज के अपमान की घटना से यह अधिक स्पष्ट हो जाता है। दिल्ली स्थित जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में ई.सन् 2016, 9 फरवरी को हुई घटना पर काफी चर्चा हो चुकी है, लेकिन कुछ वर्ष पूर्व पुणे में हुई इसी तरह की एक घटना उससे भी कहीं अधिक चौंकाने वाली थी। पुणे का फिल्म एवं टेलिविजन इंस्टीट्यूट (एफटीआईआई) जाना-माना संस्थान है, लेकिन भाजपा के वरिष्ठ नेता डॉ. सुब्रह्मण्यम स्वामी के अनुसार वहां 'नक्सली केंद्र' विकसित हो रहा है। वहां की कुछ घटनाओं से यह साफ भी होने लगा है। देश में नक्सलवाद के अध्येताओं ने तो एक पत्रकार वार्ता कर स्पष्ट किया था कि 'देश में नक्सली आंदोलन का केंद्र हाल में महाराष्ट्र की पश्चिम घाटी में फैल रहा है'। ऐसी ही एक घटना पुणे में भी घटी थी।

बात है तो सन् 2002 की, जो नई रोशनी में सामने आई है। उस दौरान इस संस्था के निदेशक एक जाने-माने अभिनेता थे। स्वतंत्रता दिवस पर यहां सुबह ध्वजारोहण का कार्यक्रम हुआ। उसी दिन निदेशक को विदेश जाना था। इसलिए वे हवाई जहाज से पहले दिल्ली गए जहां बैठक के बाद वे विदेश जाने वाले थे, परंतु दोपहर में पुणे से आए एक फोन के कारण उन्हें न केवल लौटना पड़ा बल्कि तुरत-फुरत अपने पद से इस्तीफा भी देना पड़ा। वजह, इस संस्थान के कुछ छात्रों ने निदेशक के जाते ही राष्ट्रध्वज को नीचे उतारा और उस स्थान पर बैठकर शराब पी। शराब की खाली बोतलें स्तंभ की रस्सी के इर्द-गिर्द बांध दी गई थीं और ध्वज काफी देर तक आधा उतरा रहा था। स्थानीय प्रशासन ने इस बाबत निदेशक को सूचित किया जिस पर उन्होंने अपनी विदेश यात्रा रद्द कर दी। वे पुणे पहुंचे। राष्ट्रध्वज के अपमान की जिम्मेदारी स्वीकारते हुए उन्होंने अपने पद से इस्तीफा दे दिया।

Scanned by CamScanner

यह घटना न तो केवल युवाओं के हंगामे और उनकी मौज-मस्ती से जुड़ी है और न ही किसी अपराध से संबंधित है। उल्लेखनीय बात यह है कि पिछले 10-15 वर्षों से वहां ऐसी अनेक घटनाओं का सिलसिला सा चल निकला है। दिल्ली स्थित जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (जेएनयू) की घटना भी गंभीर थी। 9 फरवरी, 2016 को वहां भारत की बर्बादी तक जंग रहेगी.. के नारे लगाते छात्रों के चित्र आज भी ताजा हैं। घटना का कारण यह था कि इसी दिन 2013 में अफजल गुरु को फांसी दी गई थी जिस पर भारत की संसद पर हमला करने का जुर्म साबित हो चुका था। गौरतलब है कि ऐसा नारा लगाने वालों में पाकिस्तान स्थित एक आतंकी संगठन के कुछ समर्थक भी शामिल थे और वामपंथी विचारों वाले युवाओं का एक गुट भी था। जेएनयू में वामपंथी युवाओं का एक गुट प्रभावी है एवं कन्हैयाकुमार वहां के छात्र संगठन का अध्यक्ष है। ये समस्त विवरण पिछले कुछ महीनों में संचार माध्यमों में बार-बार आ चुके हैं। विरोधाभास यह है कि एक तरफ धर्म को अफीम मानने वाले वामपंथी विचारों वाले युवा, वहीं दूसरी ओर इस्लाम के नाम पर जिहादी बनने वाले युवाओं का गुट एकसाथ देश की बर्बादी तक लड़ने के नारे लगा रहे थे। जेएनयू की घटना माओवादी एवं जिहादियों की संयुक्त रूप से अंजाम दी गई घटना है। वहीं हैदराबाद विश्वविद्यालय में हुई घटना भी ऐसे ही जिहादी आतंकवाद को समर्थन देने से सामने आई और अन्य गुटों ने उसे हाथोंहाथ लिया था। हैदराबाद विश्वविद्यालय में रोहित वेमुला से संदर्भित घटना सर्वपरिचित है। वहां पीएचडी के एक छात्र रोहित वेमुला ने 17 जनवरी, 2016 को आत्महत्या कर ली

Scanned by CamScanner

थी। उसने आत्महत्या करने से पहले एक चिट्ठी भी लिखी थी। उस चिट्ठी में उसने इस कदम के लिए किसी को दोषी नहीं ठहराया था। इस दुखद घटना के पीछे का सच यह है कि वह जिस छात्र संगठन में सक्रिय था, उस संगठन ने 3 अगस्त, 2015 को मुंबई पर हुए आतंकी हमले के अपराधी याकूब मेमन की फांसी के विरोध में प्रदर्शन किया था जिसमें रोहित भी शामिल था। इस संदर्भ से जुड़ी कुछ घटनाओं के कारण विश्वविद्यालय प्रशासन ने उसे होस्टल छोड़ने के लिए कहा था। उसकी चिट्ठी में इसका कोई उल्लेख नहीं है। फिर भी माओवादी एवं जिहादियों ने इस घटना को खूब उछाला। वेमुला का पत्र पढ़कर कोई भी यह जान जाएगा कि उसकी आत्महत्या से जुड़ा सच क्या है और यह भी कि कौन से संगठन इसके लिए जिम्मेदार थे।

दिल्ली अथवा पुणे में घटित ये घटनाएं हाल में सामने आईं, लेकिन देश भर में ऐसी घटनाओं का जैसे सिलसिला-सा ही है जिनके बारे में जनता को जानकारी नहीं होती। महत्वपूर्ण बात यह है कि देश में दो परस्पर विरोधी विचारों वाले आतंकी संगठन एक साथ काम कर रहे हैं। हकीकत यह है कि नक्सली एवं जिहादी जैसे संगठन जो वैचारिक रूप से एक-दूसरे के विरोधी हैं, यहां संगठित होकर लड़ रहे हैं। वहीं नगालैंड जैसे स्थानों पर हिंसा के माध्यम से विभाजनवाद को पुष्ट करने वाले चर्चवादी संगठन भी इसमें शामिल हैं। दिल्ली के जेएनयू अथवा पुणे के एफटीआईआई की घटना में लिप्त आतंकी संगठन चर्च संगठनों की मदद से हिंसक तरीके से देश को तोड़ने का व्यापक षड्यंत्र रच रहे हैं। उन्होंने एक साथ काम करने के लिए भारत के राज्यों को आपस में बांट लिया है। दिल्ली और पुणे की घटनाएं राष्ट्रविरोधी हैं, लेकिन हिंसक नहीं। मगर देश में जिहादी, माओवादी और चर्च संगठनों ने संगठित होकर पूरे देश में हिंसा का तांडव शुरू कर दिया है। इन्हीं तीन संगठनों ने आज से 15-20 वर्ष पूर्व ओडिशा में एक संयुक्त मुहिम चलाकर हिंसा फैलाई थी। देश के हरेक राज्य में उन्होंने ऐसी ही संयुक्त

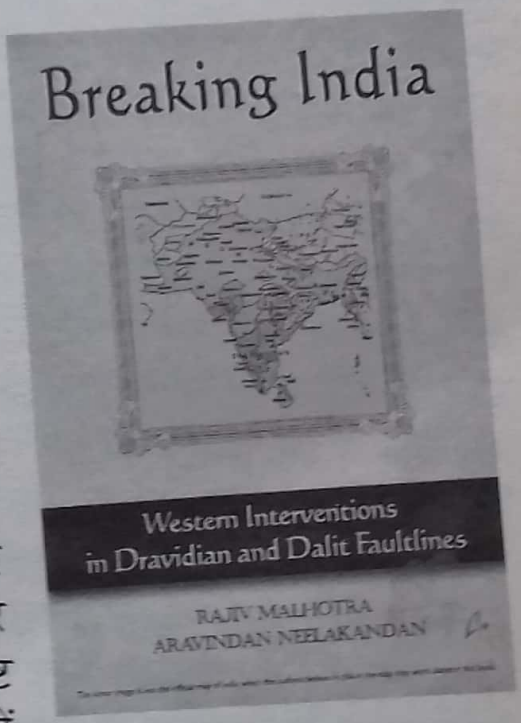

Scanned by CamScanner

नापाक कोशिशों से हिंसा एवं विभाजनवादी घटनाओं को अंजाम देना शुरू कर दिया है। कुछ समय पहले तक केवल कुछ भूमिगत संगठन ही इन मामलों में शामिल थे, लेकिन हाल में कई राजनीतिक दल भी उनकी खुली मदद करने लगे हैं।

इस विषय में 'ब्रेकिंग इंडिया' नामक एक वृहद पुस्तक सन् 2011 में प्रकाशित हो चुकी है। डॉ. राजीव मल्होत्रा और श्री अरविंदन नीलकंदन द्वारा लिखित पुस्तक में दावा किया गया है कि माओवादी, जिहादी और चर्च आतंकियों ने संयुक्त रूप से देश विरोधी व्यापक युद्ध छेड़ रखा है। लेखकों ने इनमें सौ से भी अधिक फिर भी उपरोक्त विषय को अधिक महत्व दिया गया है। ये तीनों आतंकी संगठन देश में किस तरह एकसाथ काम कर रहे हैं, उन्होंने किस तरह देश को आपस में बांट लिया है, इसका अर्थ क्या है, कौन उनकी आर्थिक मदद कर रहा है विषयों पर यहां विवेचित पुस्तक में रोशनी डाली गई है। इन तीनों आतंकी गुटों के अलावा और भी कुछ संगठन हैं जो अपने दम पर कार्यरत हैं। देश विरोधी हैं, जैसे दक्षिण में द्रविड़ आंदोलन और दलित आंदोलन के कुछ घटक। पुस्तक के अनुसार इन गुटों ने नक्सली एवं चर्च संगठनों के इलाकों को छोड़कर पूरे देश को मुगलिस्तान, द्रविड़िस्थान और दलितस्तान के रूप में बांट लिया है। इसमें दलित आंदोलन विषयों को समेटा है अधिक नहीं है, लेकिन छोटे-छोटे दलित संगठनों के कुछ प्रतिनिधि अमेरिका से इस आशय की घोषणाएं करते रहते हैं। गौरतलब बात यह है कि इसी संगठन ने इंटरनेट पर एक नक्शा डाला था जिसमें दावा किया गया था कि हमने भारत के मानचित्र के ही चार-पांच हिस्से किए हैं। इस पर विवाद उठने पर उसे वापस ले लिया गया, लेकिन तब तक बड़ी संख्या में डाउनलोड किया जा चुका था। उस पर अनेक स्थानों पर चर्चा भी हुई। पुस्तक का मंतव्य है कि भारत के विभाजन के लिए अमेरिका ने ही यहां के आंतकवाद को समर्थन देने वाले माओवादी, जिहादी, दलित और द्रविड़ संगठनों को प्रशिक्षित करने वाले अनेक केंद्र विकसित किए हैं।

विवेचित पुस्तक एक और विषय पर रोशनी डालती है। वह यह कि पश्चिम के विद्वानों द्वारा लिखा यह झूठा इतिहास ईसाई मिशनरियों और अंग्रेजों की देन है। इन्होंने भारत के इतिहास का विकृतीकरण किया है। हम आज तक इतना ही मानते थे कि भारत में आर्य बाहर से आए हैं। यह बात पूर्ण रूपेण सत्य है कि उसका स्वरूप भारत तक सीमित नहीं है। उन्हें पूरे विश्व का इतिहास बदलना था। पंद्रहवी सदी में विश्व के डेढ़ सौ देशों में सत्ता हस्तगत करने का

Scanned by CamScanner

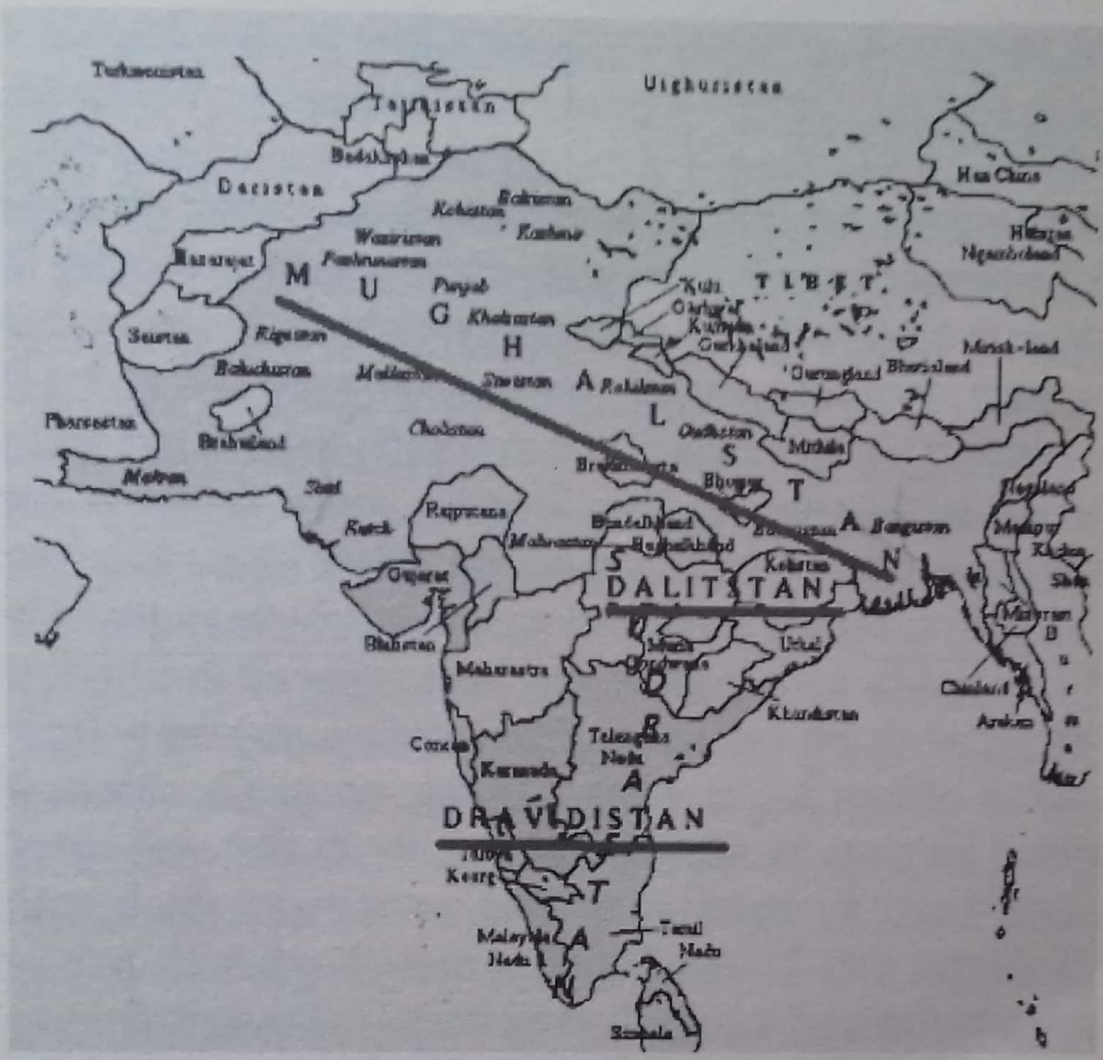

प्रयास करने के बाद दो-सौ ढाई सौ साल तक विश्व में प्राकृतिक संसाधनों को लूटने एवं अन्य तरह की लूट के बाद उन्हें महसूस हुआ कि विश्व का इतिहास हम लोगों से शुरू होता है, ऐसी बातों की प्रवृत्ति शुरू की जानी चाहिए। आधार के लिये उन्हें बाइबल की एक कथा मिली, जिसे नोहा कथा कहते हैं। यूरोप से सारे विश्व में मानव समाज पहुंचा ऐसा उसका आशय है। आर्य भारत में बाहर से आए, यह उस बनावटी कथा का हिस्सा है। विश्व में जहां-जहां यूरोप का साम्राज्य था, वहां सभी जगह जितने विश्वविद्यालय थे, वहां पर नोहा कथा को आधार बनाकर ही ऐसा अनुसंधान शुरू हुआ। आज दुनिया में एक सौ पचास से भी ज्यादा देशों में जो इतिहास सिखाया जाता है वह पूरी तरह नोहा की कथा पर आधारित है। जब यूरोपीय लोगों का शासन था तब तक दूसरा कोई चारा नहीं था। लेकिन आज इन सभी देशों में इतिहास बदलने के लिये जागृति फैल रही है। भारत में भी वैसी ही स्थिति है। इस पुस्तक की जो महत्वपूर्ण विशेषता है, उसमें उन्होंने उस पर ही रोशनी डाली है। इस विषय

Scanned by CamScanner

को इस पुस्तक के अंतिम भाग में प्रस्तुत किया है।

राजनीतिक सरपरस्ती

पिछले 60-65 वर्षों में देश में कांग्रेसी सरकारों के आंतकियों को समर्थन देने वाले राजनीतिक दलों के प्रत्यक्ष और परोक्ष समर्थन पर ही निर्भर होने के कारण इन गतिविधियों को शै मिली थी। इन गतिविधियों के खिलाफ जैसी सावधानी बरतने की जरूरत थी, वह कार्य नहीं हुआ। आज पूरे देश में आतंकी गुटों की मजबूत कड़ियां खड़ी हो चुकी हैं। किसी के पास भूमिगत संगठनों के कार्यकर्त्ताओं को छिपाने के सुरक्षित स्थान हैं तो किसी के पास बेहिसाब आर्थिक स्त्रोत हैं। किसी के पास भूमिगत आंदोलनों के लिए आवश्यक जानकारी के आदान-प्रदान की प्रणाली है तो कोई इन संगठनों के लिए जनसमर्थन जुटाने के लिए व्यापक अभियान चला रहा है तो किसी के पास युवाओं को भर्ती करने की प्रणाली है। ऐतिहासिक महत्व वाले व्यक्तियों, स्वतंत्रता आंदोलन के कुछ नामों के सहारे कुछ नया करने के आकर्षण से युवाओं को इकठ्ठा कर प्रशिक्षित किया जाता है और छोटी-मोटी घटनाएं अंजाम दी जाती हैं। जब तक इन बच्चों को सच का एहसास होता है, काफी देर हो चुकी होती है। आज देश की संप्रभुता को चुनौती देने वाले इन विभाजनकारी संगठनों के विरोध में पूरे देश को पुनः संगठित करने की जरूरत महसूस की जा रही है। इन गुटों में काम करने वाले अनेक युवाओं को ऐसे घातक षड्यंत्रों की जानकारी नहीं होती। लेकिन देखा गया है कि उन तक सही जानकारी पहुंचने के बाद उनमें से कई युवाओं ने ऐसे संगठनों से अपना नाता तोड़ लिया।

महाशक्तियों का लोभ

आज की वैश्विक महासत्ताएं केवल अपनी ही शक्ति नहीं बढ़ातीं बल्कि अन्य देशों की शक्ति कम कैसे हो, इसका भी प्रयास करती हैं। अमेरिका जैसी ताकत तो ब्रिटेन की महासत्ता से ही उभरी जिसने ब्रिटिश साम्राज्य के अधीन रहे देशों को आगे न आने देने की ब्रिटिश नीति को ही आगे बढ़ाया। लिहाजा हमें देश के सामने आईं उपरोक्त घटनाओं के बहाने पिछले 15-20 वर्षों के सारे घटनाक्रम समझना आवश्यक है। इस संदर्भ में पिछले दो दशकों के अनेक आंदोलनों के अंतिम लक्ष्यों पर दृष्टि डालने से इसकी स्पष्ट अनुभूति होती है।

Scanned by CamScanner

इस पुस्तिका में इनमें से कुछ विवरण ही देना संभव है। हां, ऐसा बिल्कुल नहीं है कि ये आक्रमण सिर्फ भारत तक सीमित रहे। जिन यूरोपीय देशों का समूची दुनिया पर वर्चस्व था, वे सब अकेले या मिल-जुलकर अपनी खोई हुई संपन्नता को पुनः प्राप्त करने के लिए सतत कार्यरत रहे। दुनिया में आक्रमण के हरेक कदम पर यूरोपीय देशों की मदद करने वाले ईसाई मिशनरी संगठन भी अपनी भूमिका अदा कर रहे हैं। फिर भी प्रश्न उठ सकता है कि भारत जैसे देश के टुकड़े करने से इन देशों को क्या मिलेगा? इस संदर्भ में इसमें एक बात स्पष्ट है कि पिछले 500 वर्षों में दुनिया में 150 देश यूरोपीय देशों के गुलाम रहे। इस गुलामी का मुख्य उद्देश्य होता है प्राकृतिक संसाधनों की लूट-खसोट। विश्व के आधे देश ब्रिटेन के गुलाम थे और अन्य पुर्तगाल, स्पेन, इटली एवं कुछ अन्य देशों के पास थे। इस लूट के लिए युद्ध में नरसंहार, एक-एक वस्तु पर कब्जे के लिए अत्याचार किया जाता और प्रताड़ना दी जाती। साथ ही कच्चे माल की कौड़ियों के भाव खरीद, व्यापार पर एकाधिकार, नाजायज कर वसूली के कारण लोगों को केवल जिंदा रहने भर के लिए अत्याचारों का शिकार होना पड़ता था। भारत पर अलग-अलग कारणों से ऐसे अत्याचार अनेक वर्षों से जारी रहे। दरअसल महासत्ताएं आर्थिक सहयोग करने का स्वांग रचकर आर्थिक वर्चस्व तो बनाती ही हैं बल्कि संबंधित देशों में कायम विभाजन का माहौल रचकर सही अवसर मिलते ही पुनः वर्चस्व की नीति पर भी सतत अमल करती हैं। औपनिवेशिक शक्तियों के आक्रमण की यह भूमिका सिर्फ भारत तक सीमित नहीं रही। अन्य देशों पर आर्थिक वर्चस्व कायम करना इन महाशक्तियों का ध्येय रहा है। केवल भारत की ही बात करें तो आक्रमण अथवा गुलामी की यह समस्या सिर्फ ब्रिटिश तक सीमित नहीं है।

भारत में इसका आरंभ सन् 1001 में गजनी के महमूद से हुआ। इन शुरुआती 800 वर्षों की गुलामी का भी लंबा इतिहास है।

Scanned by CamScanner

ऐसा नहीं है कि आज पाकिस्तान के आतंकियों को सिर्फ कश्मीर चाहिए। उनका उद्देश्य आधे से भी अधिक भारत को हथियाने का है तथा कुछ संगठनों ने तो पूरे भारत पर कब्जा लेने का भी अभीष्ट जाहिर किया है। दूसरा, हालिया घटनाओं से साफ है कि इन आतंकियों का लक्ष्य केवल भारत तक ही सीमित नहीं है। ऐसा भी नहीं कि यह मसला केवल 20वीं और 21वीं सदी तक सीमित हो। जिस तरह भारत पर 400 वर्षों तक मुगल वर्चस्व रहा था, उसी तरह चंगेज खान के वंशजों का मंगोलिया से लेकर पूर्वी यूरोप तक 300-350 वर्षों तक वर्चस्व रहा। विश्व पटल पर बाबर या चंगेज खान जैसे अनेक उदाहरण मौजूद हैं। चंगेज खान सब धर्मों का आदर करता था, ऐसी ही उसकी छवि है, लेकिन यदि परिणामतः देखा जाए तो उसका आक्रमण आज के किसी भी जिहादी आक्रमण से कुछ कम नहीं था। पिछले एक हजार वर्षों के उनके इतिहास को ध्यान में रखते हुए हमें अगली कुछ सदियों तक उनके बारे में इसी तरह की सावधानी बरतनी होगी, विश्व के कई देशों ने यही नीति अपनाई है। भारत में आज भले ही जिहादी और नक्सली आक्रमक दिखते हों, लेकिन उनके पीछे जो ताकतें हैं, उन्हें और भारत में वे जो भूमिका निभाते हैं, उन्हें जानना आवश्यक है। भारत में नगालैंड में ईसाई मिशनरियों का आंदोलन लगभग 25 वर्षों तक जारी रहा, लेकिन यह बात कोई नहीं जानता कि इस आतंकी आंदोलन को जिहादी संगठनों ने खड़ा किया था। वहीं पिछले कुछ दिनों की घटनाओं को देखें तो पूर्वोत्तर के उल्फा आतंकवादियों को अस्त्र पहुंचाने का काम जिहादियों ने किया है। इन जिहादी संगठनों ने भूमिगत होकर नक्सली और चर्च संगठनों का काम करने वालों को पूरे देश में छिपने के स्थान भी मुहैया कराए हैं। आज से 15-20 वर्ष पूर्व दक्षिण भारत में एलटीटीई अर्थात् लिबरेशन टाइगर्स ऑफ तामिल ईलम नामक संगठन सक्रिय था। उसी तरह आज भी कई स्थानों पर पीपल्स वार ग्रुप यानी पीडब्ल्यूजी नामक संगठन सक्रिय है। उसे भी पैन-इस्लाम की ओर से अस्त्र आपूर्ति और भूमिगत लोगों को छिपने के स्थान उपलब्ध कराए जाते हैं। पुस्तक में इसके कई उदाहरण दिए गए हैं।

जिहादियों और नक्सलियों के अपने-अपने दूरगामी लक्ष्य हैं और इसके लिए यूरोपीय संगठन कमर कसकर इनकी मदद को तैयार हैं। भारत के संचार माध्यमों में इन संगठनों के लिए सहानुभूति बटोरी जाए, राजनेताओं का सहयोग मिलता रहे, स्थानीय हलकों से आर्थिक मदद और सबसे महत्वपूर्ण यह कि आपसी संबंधों का आदान-प्रदान होता रहे, ये बेहद जरूरी काम होते हैं। इन

Scanned by CamScanner

तीनों संगठनों द्वारा एक-दूसरे के लिए यह सब उपलब्ध कराया जाता है। इस संदर्भ में देश-विदेश में रहकर काम करने वाले प्रो. विशाल मंगलवाडी द्वारा दिए गए एक नारे का स्मरण सबको कराना आवश्यक है। उनका कहना था कि ईसाई माओवादी, जो कुछ सैकड़ों की संख्या में है, वे शीघ्र ही सारे ओडिशा राज्य का रूप बदल डालेंगे। ओडिशा में 10-15 वर्ष तक उनकी संयुक्त आतंकी गतिविधियां जारी थीं। इन आतंकी संगठनों के संयुक्त अभ्यास एवं प्रशिक्षण शिविर चलते थे। नगालैंड के लिए उनके द्वारा स्थापित संगठन का नाम नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नगालैंड था। माओवादी और ईसाई मिशनरीज का संयुक्त नारा था सोशॅलिस्ट नगालैंड फॉर क्राइस्ट। याद रखना होगा कि नगालैंड में ये सारी गतिविधियां मुख्यतः अमेरिका स्थित बैपटिस्ट मिशन की ओर से जारी थीं।

संचार माध्यमों में पैठ

यद्यपि यह सारी जानकारी भारतीय लोगों के लिए नई अथवा चौंकाने वाली है, पर अमेरिका एवं ब्रिटेन के अनेक विश्वविद्यालयों में इस जानकारी को संकलित किया गया है। नगालैंड में शुरू होने वाला विभाजनकारी आंदोलन बाद में अन्य राज्यों में फैला जिसमें मुख्य रूप से ओडिशा, आंध्र प्रदेश और अरुणाचल प्रदेश हैं। केम्ब्रिज विश्वविद्यालय के एक शोधकर्ता प्रो. पॉल फ्रेस्टन द्वारा एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका की राजनीति में चर्च संगठनों अर्थात् 'इव्हेंजेलिस्ट संगठनों का सहयोग'विषय पर प्रस्तुत शोध निबंध में यह जानकारी दी गई है। भारतीय लोगों को सिर्फ इतनी जानकारी है कि सन् 2004 तक भारत में चर्च संगठन यूं तो सुप्तावस्था में थे। शायद उन्होंने तैयारी शुरू की थी, लेकिन 2004 के बाद उन्हें माओवादियों की मदद मिलनी शुरू हुई और बम विस्फोट, जेल तोड़ने जैसी घटनाएं एवं सहयोग न करने वाले राजनीतिज्ञों पर हमले शुरू हुए। कुछ स्थानों पर तो उन्होंने समांतर सरकारें भी स्थापित कीं। पूर्वी राज्यों में कहां-कहां खनिज हैं, उसकी गिनती शुरू हुई और उन खनिजों का उत्खनन कैसे हो, इस पर संगोष्ठियां होने लगीं। भारत के इन भूमिगत आतंकवादी आंदोलनों को दुनिया के बड़े-बड़े देशों और संगठनों के सहयोग को लेकर विश्व के बड़े-बड़े विश्वविद्यालयों को जानकारी होती है, लेकिन भारत में किसी को उसकी जानकारी न हो, इस हेतु पूरी सावधानी बरती जाती है। भारत के संचार माध्यमों अर्थात् समाचारपत्र और टीवी चैनलों में चर्च संगठनों का बड़े पैमाने

Scanned by CamScanner

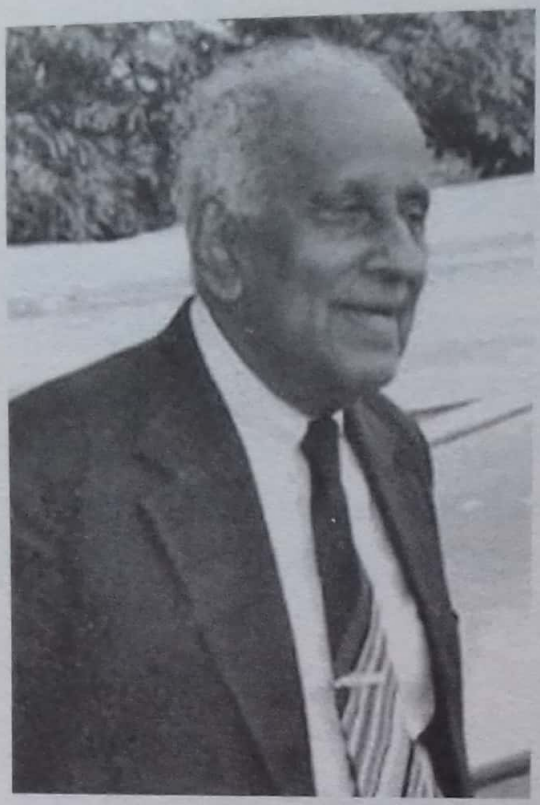

गवर्नर एमएम थॉमस ने विदेशी आतंकी आक्रमण के संबंध में उस समय की केंद्र सरकार को अवगत कराया था।

पर निवेश है। विश्व के जिन देशों में पश्चिमी देशों का वर्चस्व नहीं है अथवा उनका वर्चस्व समाप्त हो चुका है, वहां पुनः वर्चस्व स्थापित करने हेतु संचार माध्यमों से किसको कौन-सा विषय दिया जाए, किसको नहीं और किसको बदलकर दिया जाए, इस संदर्भ में नीति सूत्रबद्ध होती है। चूंकि भारतीय राजनीति पर भी उनका ही प्रभाव है, इसलिए वे किस तरह अपने मनपसंद राजनीतिक दलों को चुनावों में जितवाने में सफल होते हैं, और इसका प्रत्यक्ष अनुभव ले रहे हैं।

2014 में उत्तर प्रदेश के दादरी गांव में गोमांस के आरोप पर हत्या का मामला सामने आया। विभिन्न चैनलों और प्रिंट मीडिया ने उसे बढ़ा-चढ़ाकर दिखाया, लेकिन प. बंगाल में कुछ हिंदुओं पर हुए वैसे ही अत्याचार का भारतीय संचार माध्यमों ने बहिष्कार किया। ये हालिया घटनाओं के उदाहरण हैं, परंतु इतना स्पष्ट है कि भारत के संचार माध्यम मुख्यतः इसी उद्देश्य से काम करते हैं। वर्ष 1950 को केंद्र में रखा जाए तो उससे पूर्व पांच वर्ष की अवधि में और उसके बाद पांच वर्ष दुनिया के अनेक देशों को यूरोपीय देशों से ही स्वतंत्रता प्राप्त हुई। इन देशों में संचार माध्यम शुरू करने की दृष्टि से आर्थिक अनुकूलता नहीं थी। इसलिए इस परिस्थिति का लाभ उठाते हुए यूरोपीय देशों ने चर्च के माध्यम से मीडिया में निवेश किया और इसका उन्हें कितना लाभ हुआ, यह हम देख रहे हैं।

भारत के पूर्वोत्तर में तो वर्ल्ड काउंसिल ऑफ चर्चेज संगठन द्वारा ही समांतर प्रशासन शुरू किए जाने की स्थिति बन गई थी। उस समय नगालैंड राज्यपाल के रूप में नियुक्त एम. एम. थॉमस ने भारत सरकार को जो रिपोर्ट भेजी, वह हर भारतीय को पढ़नी चाहिए। राज्यपाल एम. एम. थॉमस ने केंद्र सरकार को इसकी विस्तृत जानकारी दी थी कि विदेशी चर्च संगठन पूर्वोत्तर

Scanned by CamScanner

राज्यों में विभाजनकारी परिस्थितियां पैदा कर रहे हैं। उन्होंने उक्त रिर्पोट में यह भी कहा था कि भ्रष्टाचार, हिंसा और सिफारिश द्वारा विदेशी ताकतें यहां काबिज हो रही हैं।

तार-तार सुरक्षा कवच

देश को तोड़ने के लिए निकले हुए ये आतंकवादी संगठन किस तरह काम कर रहे हैं, इसका मुंबई का उदाहरण तो सबको याद होगा। 2008 में हुए मुंबई हमलों का सामना करने वाले पुलिसकर्मियों को फौलादी जैकेट की बजाए कैनवस के जैकेट उपलब्ध कराए गए थे। जिस तरह पूर्वोत्तर राज्यों में जिहादी चर्च संगठन एवं माओवादियों ने देश के फौलादी रक्षाकवच को तार-तार करना शुरू किया था। 2007 में इंडिया टुडे की एक खबर में कहा गया था कि यह जाल 170 जिलों में फैला था। वास्तव में पूर्वोत्तर के राज्यों को मिलाकर एक स्वतंत्र देश स्थापित करने का प्रयास करने के बाद इन संगठनों के अपना विदेश मंत्रालय शुरू करने के उदाहरण उस समय ताजा थे। इसके बावजूद, तत्कालीन केंद्र सरकार द्वारा उसकी व्यापक खबर नहीं ली गई। इस क्षेत्र में देश की कुल खदानों के भंडार में से यहां उपलब्ध प्राकृतिक संपदा में क्रोमाइट 98.5 प्रतिशत, निकल 95 प्रतिशत, कोबाल्ट 77 प्रतिशत, बॉक्साइट 53 प्रतिशत और कच्चे लोहे की मात्रा 33 प्रतिशत है। विदेशी कंपनियों को यहां लाकर इस कच्चे माल की बाबत क्या कुछ किया जा सकता है, इसकी चर्चा आतंकी संगठनों ने शुरू की थी। उन्होंने आतंक के छोटे-छोटे नजारे दिखाकर स्थानीय लोगों में भय फैलाने का काम

Scanned by CamScanner

किया था। इसी कारण ओडिशा में 60 वर्षीय सन्यासी स्वामी लक्ष्मणानंद की हत्या हुई थी। परिणामस्वरूप स्थानीय अव्यवस्था की शुरुआत हुई। फिर भी आतंकियों को जितना चाहिए था, उतना परिणाम नहीं दिखा। इसलिए शहरवासी गुट बनाकर पूरे राज्य में आमजन के लिए असुरक्षित माहौल बनाया गया। इसी समय वहां के नायगड क्षेत्र में चर्च में एके 47, एसएलआर जैसे घातक हथियार मिले जिससे चर्च की मिलीभगत सामने आई। उनके द्वारा अंजाम दी जा रही धर्मांतरण की घटनाएं उजागर होने लगीं। 20-25 वर्षों पूर्व नगालैंड में जो स्थिति थी, वही स्थिति पूर्वोत्तर भारत के अन्य राज्यों में पैदा होने लगी।

नेपाल का हाल

हम अपने दैनंदिन में कुछ ऐसी स्थानीय घटनाएं घटित होते देखते हैं जिनसे विभाजनवाद की बू आती है, लेकिन राष्ट्रीय स्तर पर यह षड्यंत्र कितने गहरे तक काम करता है, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। पिछले 25 वर्षों में नेपाल में जो घटनाएं घटीं, उनसे उस देश में असुरक्षा की भावना तो बनी ही बल्कि चीन, अमेरिका और पाकिस्तान के पिट्ठू भी कदम-कदम पर वहां दिखने लगे। वहां माओवादी सरकार स्थापित हुई और प्रधानमंत्री पद पर पुष्प कमल दहल अर्थात् प्रचंड नामित हुए। नेपाल एक ऐसा देश है जहां स्थानीय स्तर पर ज्यादा विकास नहीं हुआ है, लेकिन दुनिया की महाशक्तिओं को लगता है कि उस देश में उसकी पैठ होनी चाहिए। वहां आज भी चीन के लिए नाराजगी है, क्योंकि लोगों ने तिब्बत की हालत देखी है। लेकिन वहां एक तरफ जहां माओवादी आंदोलन फैलता दिखता है तो दूसरी ओर नेशनल काउंसिल ऑफ चर्चेज की शाखा भी स्थापित हुई। वहां की माओवादी सरकार ने चर्च संगठन के लोगों को राष्ट्रीय स्तर पर महत्वपूर्ण स्थान एवं पद देना शुरू किया। इससे भी महत्वपूर्ण यह कि भारत की सिंधु, ब्रह्मपुत्र जैसी नदियां चीन से आती हैं, जिनमें से कई नदियां नेपाल से होकर आती हैं। उनमें से किन के प्रवाह बंद करने हैं और कहां बाढ़ का प्रकोप लाना है, इन सब मुद्दों पर भी वहां चर्चा शुरू हुई।

मिशनरियों का सच

भारत के पूर्वी राज्यों में इन तीनों आतंकी संगठनों ने जिस तरह की गतिविधियां चलाईं, वैसे दृश्य दक्षिणी राज्यों में भी देखने को मिले। दरअसल, यहां तो

Scanned by CamScanner

ब्रिटिश और ईसाई मिशनरियों ने 200 वर्षों तक अपने पैर पसारे ही रखे थे। अगर तमिलनाडु की पुरानी घटनाओं पर नजर डालें तो पता चलता है कि भारत की एकता को तोड़ने के लिए किस तरह सदियों तक प्रयास किए गए। इन 200 वर्षों की 200 गलतियों को एकत्र कर युवा पीढ़ी को बताया जाए, तो युवाओं में दो सदियों के इस आक्रमण का समूल नाश करने का संकल्प और साहस आ सकता है।

ध्यान लेने लायक बात यह है कि अपनी सत्ता होने के कारण इनमें से हर एक देश कुछ ऐसी बड़ी गलतियां कर बैठा है जिन्हें गिना जाए तो यूरोपीय आक्रमणकारियों के पापों की विस्तृत सारणी तैयार हो सकती है। यहां इनमें से एक-दो मुद्दों का उल्लेख करना ठीक होगा। यूरोपीय आक्रांताओं का भारत के बारे में यह कहना है कि यहां सर्वप्रथम सन् 52 में ईसा मसीह का एक शिष्य सेंट थॉमस आया था। उसने पश्चिमी तट पर ईसाई धर्म का प्रचार-प्रसार किया। आज भी कई स्थानों पर यही परंपरा बताई जाती है। सेंट थॉमस की कब्र भी केरल में दिखाई जाती है। यदि हम इस जानकारी के विवरण खंगालें तो समझ में आता है कि इस प्रसंग से जुड़े समस्त विवरणों को 8वीं सदी में लिखित रूप दिया गया है अर्थात् यह मामला इतना पुराना नहीं है। सारा मामला 18वीं सदी में लिखा गया है। सेंट थॉमस का वर्णन इस तरह किया गया है कि वह बाइबिल की एक प्रति लेकर आया था। पर उसके हाथ में ऐसी पुस्तक दिखाई गई है जो 18वीं सदी में थी। इस अतिरेक में उत्साहपूर्वक यह भी दिखाया गया है कि सेंट थॉमस दक्षिण अमेरिका भी गया था। इन सारे विवरणों का सार यही निकलता है कि ब्रिटिश हों, पुर्तगाली अथवा ईसाई मिशनरी हों, सबका उद्देश्य केवल भारत के संसाधनों की लूट ही था। उस लूट का हिसाब आज तक नहीं हुआ। अमेरिका का प्रत्येक विश्वविद्यालय भारत जैसे थर्ड वर्ल्ड कहे जाने वाले देश में छोटी-मोटी सामाजिक असमानता के अध्ययन के लिए अध्ययन केन्द्र चलाता है। इन विश्वविद्यालयों द्वारा भारत की छोटी-बड़ी सामाजिक समस्याएं चुनी जाती हैं, लेकिन विडंबना यह है कि इसी आड़ में इसके लिए चुने गए संबंधित स्थानों के छात्रों की मदद से आतंकी संगठनों का पोषण होता है। इन साम्राज्यवादी शक्तियों की पिछली चार-पांच सदियों में लगभग 150 देशों पर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सत्ता रही है। पर विडंबना यह है कि इसकी आड़ में वहां के प्राकृतिक संसाधनों की लूट पर, वहां की जनता पर हुए अत्याचारों पर तथा नरसंहार के आंकड़ों पर अभी तक कोई भी शोधकार्य नहीं हुआ। रोम में, जहां मिशनरियों का मुख्यालय

Scanned by CamScanner

है, आज कलाकौशल से सज्जित हजारों इमारतें हैं। कहा जाता है कि संपूर्ण दुनिया की कला वहां विद्यमान है। इन संबंधित कलाओं के बारे में जानकारों का भी वही कहना है, लेकिन ये सारी अट्टालिकाएं इसलिए खड़ी हैं क्योंकि मुख्यतः विश्व के 150 देशों से लूट का हिस्सा उन्हें मिला। वहां के मिस्त्रियों और निर्माण कार्य मजदूरों का रोजगार 500 वर्षों की दो-तिहाई दुनिया की धन-संपदा लूट पर टिका है। केवल रोम ही नहीं बल्कि संपूर्ण यूरोप की संपन्नता का मुख्य आधार दो-तिहाई दुनिया में चार-पांच सदियों तक जारी अत्याचार, नरसंहार और लूट है।

व्यवस्थित विरोधी धड़े

यह सर्वज्ञात तथ्य है कि 18वीं और 19वीं सदी में किसी भी देश पर राज करने के लिए उस पर आक्रमण करना और लोगों को गुलाम बनाना ही मुख्य तरीके थे। परंतु 21वीं सदी में संबंधित देश के युवाओं को अपने विश्वविद्यालय में अध्ययन का अवसर देने के नाम पर बुलाना और तीन-चार वर्षों तक उन्हें गहन प्रशिक्षण देकर उनके देश के किसी आतंकी गिरोह का हिस्सा बनाना सामान्य तरीका है। आश्चर्य की बात यह है कि संबंधित देश में जिहादियों और माओवादियों के गिरोहों को अमेरिका स्थित विश्वविद्यालयों में प्रशिक्षित किया जाता है। अमेरिका, ब्रिटेन और यूरोप के कुछ देश आतंकी प्रशिक्षण की अनोखी स्वतंत्र संस्थाएं हैं। ये देश स्वतंत्र रूप से ऐसी गतिविधियों का वित्त पोषण तो करते ही हैं, साथ-साथ यूरोपीय देशों के अनेक संगठन, मुद्रा निधि, मानवाधिकार संगठन, बहुराष्ट्रीय कंपनियां, अनेक विश्वविद्यालयों में कुछ विषयों के प्रति समर्पित विभाग, संचार माध्यम की कंपनियां इस काम में लिप्त होती ही हैं, लेकिन इसके समानांतर ईसाई मिशनरी संगठन भी उतनी ही महत्वपूर्ण गतिविधियों में संलग्न दिखते हैं। हालांकि, अफ्रीका के केन्या, बोत्स्वाना, युगांडा, रवांडा जैसे गरीब देशों में उनके ऐसे रूप और गतिविधियां चाहे जितनी अनुचित हों, हमें वे नहीं अखरतीं। लेकिन पिछले 10 वर्षों में चीन जैसी महासत्ता को भी इन पश्चिमी संगठनों एवं मिशनरियों ने चुनौती दी है। वहां पश्चिमी बहुराष्ट्रीय कंपनियां हर एक कारखाने के साथ एक भूमिगत चर्च बनवा रही है और चीन सरकार उसे धराशायी भी करती जा रही है। वहां के प्रत्येक प्रांत में हर वर्ष 500 चर्च इमारतों को धराशायी करने की घटनाएं हो रही हैं। अतः इस शोरगुल में हम कहां हैं, यह हमें ही तय करना होगा। यहां तो हम भारत माता की जय बनाम भारत की बर्बादी चाहने वालों

Scanned by CamScanner

अमेरिका में प्रशिक्षित अरुंधती राय जिनका सब आतंकवादी संगठनों से संपर्क है।

के बीच आंतरिक संघर्ष में ही फंसे हुए हैं।

संक्षेप में कहें तो, पश्चिमी महासत्ताएं भारत में भेजने के लिए लैब मेड माओवादी और लैब मेड जिहादी तैयार करती हैं। इसका सत्य यह है कि भारत की राजनीतिक व्यवस्था को ध्वस्त करने हेतु आंदोलन करने वाले और इसके लिए कुछ भूमिगत गतिविधियां चलाने वाली जो संस्थाएं और संगठन हैं, उनमें से अधिकाधिक पश्चिमी देशों की शै पर ही संचालित होते हैं। पश्चिम के अनेक विश्वविद्यालयों में दक्षिण एशिया अध्ययन केंद्र के नाम से ये विभाग चलते हैं जिनमें इस तरह की गतिविधियों का समावेश होता है। वहीं वामपंथी विचारों वाले ऐसे अनेक संगठन हैं जिनका चेहरा तो प्रगतिशील है, लेकिन इनके कार्य विषय सिर्फ भारत तक सीमित नहीं हैं। सच यह है कि दुनिया की किसी भी महासत्ता की विश्व के हर एक देश में विस्तार की नीति होती है। एक-दूसरे को मात देने के लिए वे शत्रुता की सारी चालें तो चलते ही हैं, लेकिन मित्रता दिखाकर भी एक-दूसरे की जड़ें काटने का काम करते हैं। छोटे और मझोले देशों में विद्रोह खड़ा करने वालों के रूप में कार्यकर्त्ता भेजकर ये महासत्ताएं अपने-अपने केंद्र खड़े करती हैं। भारत जैसे 125

Scanned by CamScanner

करोड़ की जनसंख्या वाले देश में हर राज्य में कई विद्रोही संगठन नजर आते हैं। पिछले 60-65 वर्षों में भारत सरकार को प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से ऐसे संगठनों और राजनीतिक दलों की जरूरत होती ही थी। इसलिए उनकी जड़ें यहां गहरे तक जम चुकी हैं। अब भले ही उनके काम के संदर्भ बदल गए हों, फिर भी यह नहीं माना जा सकता कि वे ज्यादा देर तक चुप रहेंगे। इनके द्वारा शुरू किए गए कार्य आम हित में नहीं बल्कि यहां की सत्ता एवं संप्रभुता को खत्म करने की दिशा में हैं।

पश्चिमी और मुस्लिम देशों के संबंध पिछले 1,300 वर्षों से तनाव से भरे हैं। पिछले सौ वर्षों में दुनिया के कई देशों में फैले वामपंथी आंदोलनों से भी पश्चिमी देशों के संबंध पहले दिन से ही शत्रुता भरे रहे। फिर भी सवाल उठता है कि इनका भारत के संदर्भ में एकसाथ पनपने का कारण क्या है? इसका मूल कारण यह है कि भारत की सभ्यता, यहां की जीवनशैली, मुख्य रूप से धार्मिक एकता, ये सारी बातें दुनिया के घटकों को शत्रु समान प्रतीत होती हैं। भारत का अस्तित्व ही इन सबको बुरी तरह कचोटता है। मुस्लिम और पश्चिमी देशों का यहां क्रमशः 800 और 200 वर्षों तक रहा शासन लूट-खसोट का रहा। मार्क्सवादी और माओवादी देशों की वैसी पृष्ठभूमि न भी हो तो भी उन्हें यह लगने लगा है कि जो उनके लिए संभव है, वह भारत के भी हित में हो सकता है। इसलिए एक-दूसरे की नकल करते हुए एक-दूसरे के कार्यक्षेत्र में गहरे तक पैठ जमाने के उनके प्रयास बदस्तूर जारी हैं। पश्चिमी देशों में लैब मेड जिहादी और लैब मेड माओवादियों के संदर्भ में देखा जाए तो अलग-अलग विश्वविद्यालय और गैर-शिक्षण संस्थाएं भी इनमें शामिल दिखती हैं। अमेरिका की इंस्टिट्यूट ऑफ पॉलिसी स्टडीज ऐसी संस्था है जो केवल भारत में ही नहीं बल्कि अधिकांश एशियाई देशों में वामपंथी विचारों वाले लोगों के बीच काम करती है। ऊपरी तौर पर यह संस्था विदेश नीति, मानवाधिकार, अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक नीतियों और भारत के लिए अधिक महत्वपूर्ण विषय यानी दलित स्टडीज को प्राथमिकता देती हैं। इनके एजेंडे में विषय कितने भी हों, फिर भी इनका मुख्य प्रयास तीसरी दुनियां के देशों में, उनमें विद्रोह करने वाले संगठनों एवं व्यक्तियों को शै देकर उन्हें मजबूत करना होता है। इंस्टिट्यूट ऑफ पॉलिसी स्टडीज नामक मुख्य संस्था की तीसरी दुनिया के प्रत्येक देश में स्वतंत्र शाखा है। वामपंथी विचारों वाली इस संस्था के साथ-साथ क्लुग और टेंपल्टन नामक चर्च संगठनों से संबंधित संस्थाएं भी इन कार्यों में रुचि लेती हैं।

Scanned by CamScanner

मुस्लिम प्रश्न

विवेचित पुस्तक के शोधकर्ताओं का मुस्लिम अध्ययन यह कहता है कि पिछले 60-70 वर्षों में स्वतंत्रता प्राप्त करने वाले देशों को जिहादी आतंक से कैसे प्रभावित करना है, इसका डिजाइन (रूपरेखा) अमेरिका में ही तैयार होता है। अल कायदा हो या हालिया आईसिस, मध्य एशिया के आतंकी संगठनों के नाम पर महासत्ताओं के पिट्ठू विकास के सोपान पार करने का प्रयास करने वाले देशों के आत्मविश्वास को निरंतर कमजोर करते रहते हैं। इसके लिए पश्चिमी महासत्ताएं ही नित प्रयोगरत रहती हैं। इसका पहला चरण यह है कि भारत में मुस्लिमों की जो स्थिति है, उसके लिए भारतीय समाज, संस्थाओं और भारतीय सरकार को जिम्मेदार ठहराते हुए उनकी कठोर आलोचना करना और भारत में जो मुस्लिम गुट आतंकवाद फैलाते हैं, उसके लिए भारत ही जिम्मेदार है, ऐसे प्रचार को बढावा देना अमेरिकी विश्वविद्यालयों में दक्षिण एशिया का अध्ययन करने से जुड़ी समस्याओं और सामाजिक दशा-दिशा का अध्ययन करने का दावा करने वाले ये केंद्र कई विद्वानों को छात्रवृत्ति देकर पुष्ट करते हैं। इतना ही नहीं, भारतीय समाज को विखंडित करने के लिए उनके काम की शैली भी तय करते हैं। इसका सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण है अमेरिका स्थित इंडियन मुस्लिम काउंसिल। अमेरिका में होने वाले विश्वविद्यालयीन शोधकार्य पर उसका क्या असर होता है, इस विषय में गहरे तक जाकर जब तक उसका मुआयना नहीं किया जाता तब तक उसके स्वरूप को नहीं समझा जा सकेगा और न ही ऐसे गहरे षड्यंत्र पर विश्वास ही होगा।

दरअसल इंडियन मुस्लिम काउंसिल (आईएमसी) भारतीय मुस्लिमों के हितों की रक्षा करने वाला एक अध्ययन गुट है। उसके अमेरिकी नेताओं में कलीम ख्वाजा शामिल हैं। अमेरिका में 9/11 की घटना के बाद भी वे तालिबान का समर्थन करते दिखते हैं। पर विश्वविद्यालयों अथवा अनुसंधान केंद्रों और सीमित मात्रा में मुलाकातों के लिए उन्हें छात्रवृत्ति देने वाली संस्थाओं को लेकर वहां के राजनीतिक वर्ग को भी कोई आपत्ति नहीं होती। आईएमसी के लोग ऐसी मुद्रा अख्तियार करते हैं मानों इस विषय को उन्होंने अमेरिकी कूटनीतिज्ञों को भी समझा दिया हो और अमेरिकी संसद सदस्य एवं राजनेता भी यह कहते दिखते हैं कि तुम्हारे कारण ही हमें भारत के मुस्लिमों के बदतर हालात का पता चला। मुस्लिम कार्यकर्ताओं और अमेरिकी विचारकों के इस कथन में कुछ ऐसी समानता निहित है जिसके अंतर्गत

Scanned by CamScanner

कहा जाता है कि भारत में यद्यपि आज भी कुछ आर्य टोलियां देश पर अपना कब्जा बताती हों, लेकिन वहां का कब्जा असल में जो इसका हक रखते हैं, उन्हीं को मिलना चाहिए।

व्यापक सांठ-गांठ

भारत में 'तहलका' पत्रिका के संपादक तरुण तेजपाल जाना-माना नाम हैं। उनका विवादित होना दीगर विषय है, लेकिन इन तीनों आतंकी संगठनों के संदिग्ध कार्यकलापों को उजागर करने हेतु उनके द्वारा लिखित एक लेख का काफी अच्छा उपयोग हुआ, जिसका उल्लेख यहां आवश्यक है। उन्होंने 2008 में अमेरिका में इंडियन मुस्लिम काउंसिल की वार्षिक संगोष्ठी में बीजभाषण दिया था। आतंक के इन तीनों रूपों की कई विशेषताओं को दर्शाया गया था। 2008 में अमेरिका में न्यूयॉर्क स्थित वर्ल्ड ट्रेड सेंटर के जुड़वां टावर गिराने की घटना को सात वर्ष गुजर चुके थे। उस दौरान अमेरिका की सेना पश्चिम एशिया में जिहादी देशों के साथ युद्धरत थी। अमेरिका में हर तरफ जिहादी आतंकवादियों के विरोध में माहौल बना था। फिर भी भारत में जिहादियों के पक्ष में विषवमन करते हुए यहां अस्थिरता उपजाने में पश्चिमी महासत्ताएं कहीं भी कम नहीं थीं। वामपंथी और मुस्लिम जिहादियों की वन मैन आर्मी तैयार करने का कार्यक्रम जारी था। उनके समर्थन में इंडियन मुस्लिम काउंसिल के माध्यम से सम्मानित हो रहे थे। भारत के तिरस्कार पर पलने वाली और अमेरिकी छात्रवृत्ति के सहारे जिहादियों की पक्षधर और वामपंथ का प्रचार करने वाली अंगना चटर्जी को इस परिषद में टीपू सुलतान सम्मान प्रदान किया गया। उस दौरान अमेरिका में कई भाषण देने वाली तीस्ता सीतलवाड़ भी मौजूद थीं। वहीं आईएमसी की परिषदों में उपस्थित एवं भारत विरोधी प्रस्तावों में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेने वाले लिस मैक्कीन, अमेरिका के कांग्रेस सदस्य जॉन कोन्यर्स का भी समावेश था। अमेरिका का रेडिकल मुस्लिम गुट भी इन परिषदों में उपस्थित रहता है। तीस्ता सीतलवाड़ की पृष्ठभूमि के संदर्भ में उल्लेखनीय है कि उन पर गुजरात दंगों के दौरान गर्भवती मुस्लिम महिलाओं को आग में झोंकने के आरोप हैं। उच्चतम न्यायालय ने विशेष जांच टीम भेजकर उनके खिलाफ जांच करवाने का आदेश दिया था। जांच में स्पष्ट हुआ कि तीस्ता सीतलवाड़ ने कई महिलाओं से जिन हलफनामों पर हस्ताक्षर लिए थे, वे अंग्रेजी में थे, जो उन महिलाओं को नहीं आती थी। आईएमसी ने सीतलवाड़ के समर्थन में मुंबई के 26/11 हमलों के संदर्भ में

Scanned by CamScanner

यह कहकर पाकिस्तानी आतंकियों को समर्थन देने की भूमिका निभाई थी कि उस अभियोग के तहत भारत में जिन मुस्लिम आरोपियों की जांच चल रही थी, उसमें अल्पसंख्यक युवाओं को बिना वजह तकलीफ दी जा रही है। दरहकीकत ये अमेरिकी संगठन और उनसे सामंजस्य रखने वाली यूरोपीय संस्थाएं हमेशा भारत की कुछ संस्थाओं की मदद से कोई न कोई भारत विरोधी उपक्रम चलाते रहते हैं। भारत का विश्वविद्यालय अनुदान आयोग देश के सभी विश्वविद्यालयों को उनके शैक्षिक उपक्रमों के अनुसार अनुदान प्रदान करने वाली अत्यंत महत्वपूर्ण संस्था है। इसने अमेरिका की आईएमसी से मिलकर भारत के राजनीतिक एवं सामाजिक संदर्भ में हिंदू राष्ट्रवादी संगठनों का अध्ययन नामक उपक्रम चलाया था। उसमें मुस्लिम संगठनों के साथ-साथ कई इव्हेंजेलिकल अर्थात् चर्च संगठन भी सहभागी थे। भारत के कई प्रोफेसरों और कुछ विश्वविद्यालयों के विभागों को भी उसमें सम्मिलित किया गया था। भारत में लंबे समय तक कांग्रेसी सत्ता रही और जिहादी, माओवादी और पश्चिमपरस्त संगठनों को समर्थन देने वाले राजनीतिक दलों के समर्थन पर ही कांग्रेस यहां राज कर सकीं। इसलिए जिहादी, माओवादी और इव्हेंजेलिस्टों की भारत विरोधी संयुक्त गतिविधियां यहां हाथ-पांव फैला सकीं। परंतु अब भारत के संदर्भ बदल चुके हैं। इसलिए शायद ऐसा लगे कि इनकी गतिविधियां कम हो गई हैं, लेकिन चूंकि ये सारे संगठन महासत्ताओं के इशारों पर चलते हैं, अतः इनका भारत विरोध जारी रहने की संभावना है।

डॉ. आंबेडकर की चिंता

पूरी दुनिया में एक-दूसरे के विरोध में खड़े रहने वाले इन तीनों आतंकी संगठनों के उपद्रव को लेकर देश के संविधान लेखक डॉ. भीमराव आंबेडकर ने भी गहरी चिंता व्यक्त की थी। इस संदर्भ में उनके आलेख पढ़ें, तो पता चलता है कि वे देश के भविष्य की चिंता करने और उसके बचाव के मार्ग सुझाने वाले प्रखर दूरद्रष्टा थे। यह चिंता उन्होंने अपने किसी भाषण या किसी समाचार पत्र के लेख में नहीं बल्कि देश के संविधान को पारित करने हेतु आमंत्रित संविधान सभा में भाषण के दौरान व्यक्त की थी। तब उन्होंने कहा था, **'ऐसा नहीं कि भारत इससे पहले कभी स्वतंत्र देश नहीं था। इससे गंभीर मुद्दा यह है कि इस देश ने कुछ सदियों पूर्व अपनी स्वतंत्रता गंवाई, इसलिए चिंता होती है कि फिर ऐसा हुआ तो क्या होगा। इस देश के ही कुछ लोगों ने विदेशी ताकतों से हाथ मिलाया था, इसलिए देश की स्वतंत्रता**

Scanned by CamScanner

खो गई। इसलिए चिंता होती है कि क्या वही इतिहास दोहराया जाएगा। इस देश के कई सदियों पुराने पारंपारिक दुश्मन एवं इस देश में अपने-अपने सीमित स्वार्थों के लिए लड़ने वाले राजनीतिक दल एकत्र आएं और वे देशहित को बलि दे दें तो? इस चिंता की कल्पना ही बेचैन कर देती है। लेकिन यदि ऐसा होने लगे, तो इस देश पर गर्व करने वालों को तब तक लड़ते रहना चाहिए जब तक खून की आखिरी बूंद उनकी नसों में दौड़ती रहे।'

'डिवाइड, रूल एंड लूट'

भारत में इन आतंकियों द्वारा अंजाम दी गई घटनाएं और उन्हें विदेशों से मिलने वाला सहयोग को देखें तो किसी भी राष्ट्रभक्त का बेचैन होना स्वाभाविक है, लेकिन ये संगठन देश में दहशत फैलाने तक ही सीमित नहीं हैं। जिन घटनाओं को आधार बनाकर पूरी दुनिया में भारत को बदनाम किया जा सकता है, ऐसी कई घटनाएं आज भी घट रही हैं। 'बांटो और राज करो' ही अंग्रेजी नीति रही। एक राजा को दूसरे के खिलाफ खड़ा करना और दोनों से कर वसूलना, यही उनका कार्यक्रम और नीति थी। पर उनकी यह कुटिलता सिर्फ भारत तक सीमित रही हो, ऐसा भी नहीं था। यह दुनिया के 125-150 देशों पर राज करने वाले सभी यूरोपीय देशों की वह दीर्घकालिक कार्यपद्धति थी जो आज स्वतंत्रता प्राप्ति के कई दशकों बाद स्पष्ट हो रही है। वास्तव में यह नीति सिर्फ 'डिवाइड एंड रूल' ही नहीं बल्कि यह डिवाइड, रूल एंड लूट की थी। लूट यानी दुनिया भर से लगातार प्राकृतिक संसाधनों एवं सामग्री की लूट। उनकी नीति सबको दिख

Scanned by CamScanner

रही थी, फिर भी 125 देशों में कोई भी देश संगठित रूप से इसका प्रतिकार नहीं कर सका। कारण यह कि छोटे-छोटे गुटों से लेकर बड़े-बड़े देशों में हर एक इकाई को लगातार छिटपुट संघर्षों में उलझाए रखा गया। 1950 के बाद कोई यूरोसेंट्रिक महासत्ताओं का प्रतिकार नहीं कर सका। कुछ प्रयोग हुए, लेकिन वे भी सीमित साबित हुए। दूसरी तरफ यूरोसेंट्रिक वर्ल्ड अर्थात् यूरोप के देश, वहां के चर्च संगठन, ब्रिटेन जैसी महासत्ता और अमेरिका के दुनिया पर डिवाइड, रूल एंड लूट के प्रयोग जारी रहे। दो, तीन अथवा चार सदियों तक यूरोपीय वर्चस्व के अधीन रहे इन देशों की हालत इतनी बदतर हो चुकी थी कि यूरोपीय देशों के इस नाटक में सहभागी होने को ही उन्हें अपना भाग्य मानना पड़ा। पर अब 60-70 वर्षों बाद स्थिति काफी बदल चुकी है, फिर भी यूरोपीय महासत्ताओं का दखल बदस्तूर जारी है। इनमें चर्च संगठनों की दखलअंदाजी अन्य देशों जितनी राजनीतिक न भी हो, लेकिन यूरोसेंट्रिक राजनीति को वे पूरी ताकत से मदद देने वाले साबित हुए हैं। वर्ष 2001 में डर्बन में हुई राष्ट्रसंघ की ह्यूमन राइट्स परिषद इस दृष्टि से गहन अध्ययन करने लायक है। यह परिषद वंश विद्वेष, वांशिक विवेकहीनता और असहिष्णुता (रेसिज्म, रेशियल डिस्क्रिमिनेशन, जेनोफोबिया एंड इन्टॉलरेन्स) विषय पर आधारित थी। उस परिषद के सामने एक देश के रूप में भारत असहिष्णु है, ऐसी छवि बनाने का षड्यंत्र रचा गया था। डर्बन परिषद में भारत के दलित तथा द्रविड़ विषय को भी रखा गया। इस दौरान भारत सरकार अडिग रही, लेकिन फिर भी आगे के 10 वर्षों तक इन विषयों को वैश्विक मंचों पर उछाल कर भारत के साथ सौतेला व्यवहार होता रहे, ऐसी ही मंशा के साथ काम किया गया। आज भी ये जातीय संगठन कई देशों को एक बदनाम देश के तौर पर घोषित करते हैं। उनका इरादा भारत की हालत भी वैसी ही करने का था। पर इस विषय की एक और पृष्ठभूमि थी। वह यह कि उस समय भारत में अटल जी की सरकार थी और ऐसा लगने लगा था कि अब कांग्रेस खत्म हुई। इसलिए अटल जी जिन विचारों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे, उनका ही प्रभाव रहने वाला था। पर उसे उखाड़ फेंकने तथा भारत को सुनहरे भविष्य पर विचार करना ही संभव न हो सके, यह चाल चली गई थी। उस चाल की आज समीक्षा करें, तो आज भी पुनः अटल जी के रास्ते को मानने वालों की सरकार है और ऐसे में यूरोसेंट्रिक दुनिया के इसी तरह के कुछ संयुक्त और स्वतंत्र प्रयास दिखें तो हमें सचेत रहना होगा। इस विषय की प्रस्तुति के लिए दोनों लेखकों ने जो परिश्रम किया है, वह प्रशंसनीय है। इस पुस्तक से यह बात स्पष्ट होती है कि विश्व की महासत्ताएं अपना-अपना सामर्थ्य बनाए रखने

Scanned by CamScanner

के लिए किस स्तर तक जाकर, कौन-सी नीतियां सामने रखती हैं, इन महासत्ताओं की मददगार कई कंपनियों का बजट कई देशों के वार्षिक बजट से अधिक होता है। लगातार बढ़ते रहने के उनके उद्देश्य के लिए तीसरी दुनिया के 60-70 वर्षों पूर्व स्वतंत्र होने वाले देशों को किस तरह खिलौना बनाया जाता है, इसका उदाहरण डर्बन परिषद से मिलता है।

डर्बन परिषद की तैयारियां

डर्बन परिषद को सामने रखकर द्रविड़ एवं दलित विषयों को किस तरह बढ़ावा दिया गया, यह देखने लायक है। इन दोनों विषयों की शुरुआत बिल्कुल छोटे स्तर पर की गई, लेकिन इस विषय को वैश्विक स्तर पर ले जाया जा सके और उसके आधार पर भारत को दुनिया द्वारा लगाए गए कड़े प्रतिबन्धों

का सामना करना पड़े, इस तरह उनकी रचना की गई थी। द्रविड़ विषय के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर तीन संगठन तैयार रखे गए थे जिनमें यूरोप एवं अमेरिका के बड़े-बड़े विश्वविद्यालयों के डिपार्टमेंट ऑफ साउथ एशियन स्टडीज का समावेश था। दलित विषय के लिए भी ल्युथेरन वर्ल्ड फेडरेशन, जेनेवा, वर्ल्ड काउंसिल ऑफ चर्चेज और ग्लोबल मिशन ऑफ इवेंजेलिकल ल्युथेरन चर्च, अमेरिका को हर तरह की तैयारी करने के लिए कहा गया था। यह तैयारी उन्होंने कैसे की, इसे तब नहीं जाना जा सका, लेकिन वर्ष 2010 में जब उसका प्रभाव खोजने की बारी आई, तब वह स्पष्ट हुआ। इसके लिए

Scanned by CamScanner

1998 में दलित सॉलिडेरिटी नेटवर्क नामक एक संस्था स्थापित की गई। इसी से वर्ष 2000 में इंटरनेशनल दलित सॉलिडेरिटी नेटवर्क स्तर की संस्था खड़ी की गई जिसका मुख्यालय डेनमार्क की राजधानी कोपेनहेगेन में रखा गया। उसी समय तमिलनाडु में द्रविड़ विषय पर सन् 2000 में इंडियन इंस्टीट्यूट की ओर से 'द्रविड़ धर्म जातिभेद नष्ट कर सकता है' विषय पर एक साधारण संगोष्ठी की गई। यह सब डर्बन परिषद की ही तैयारियां थीं।

वास्तव में यूरोपीय लोगों और उनसे पहले गुलाम रहे देशों की नीतियों पर आज भी कई विश्वविद्यालयों में शोधकार्यों की आवश्यकता है। यूरोप का इतिहास ही विश्व का इतिहास है, इस तर्क को दुनिया पर थोपने के लिए यूरोपीय देशों ने 19वीं सदी में दुनिया के 300-400 से अधिक विश्वविद्यालयों में अध्यापन शुरू किया था, तो इसके बरक्स स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उन देशों में अपनी पैठ बनाने के लिए ब्रिटिश एवं अन्य यूरोपीय आक्रमकों ने कौन-सी नीतियां अपनाई हैं, इसका अध्ययन किए जाने की आवश्यकता है। छोटे-छोटे देशों को तो छोड़िए, भारत में भी उस दिशा में पर्याप्त प्रयास आरंभ होते हुए नहीं दिखते। इस दृष्टि से डर्बन परिषद अत्यंत महत्वपूर्ण है। एक बात यह कि उसमें चर्च, ब्रिटिश सरकार, अमेरिका और अन्य यूरोपीय देश एक साथ काम कर रहे थे। उस परिषद में तो उन्हें कोई सफलता नहीं मिली, लेकिन फिर भी उन्होंने उसी आधार पर पूरी दुनिया में सैंकड़ों स्थानों पर इस विषय को उठाना शुरू किया। गौरतलब यह है कि वास्तविक दलित अथवा द्रविड़ आंदोलन में से कोई भी उसमें शामिल नहीं था। जो थे, वे चर्च संगठन के कार्यकर्त्ता थे। इसी कारण नेशनल कैम्पेन फॉर दलित ह्यूमन राइट्स नामक संगठन को गठित किया गया। पॉल दिवाकर, जो इंटरनेशनल दलित सॉलिडैरिटी नेटवर्क के नियंत्रक थे, इस दूसरे संगठन में आमंत्रित थे। इसी तरह जेसुइट सेमिनरी से निकला हुआ मार्टिन मक्वान उनका सह-आमंत्रक था। मार्टिन गुजरात में दलितों के लिए काम करने वाले एक संगठन से जुड़ा था, लेकिन वहां उसकी विपरीत छवि थी। सन् 2003 में उसने 'नेशनल जिओग्राफिक' पत्रिका में दलितों के बारे में एक लेख लिखा था जिसके बाद उसकी छवि डॉ. आंबेडकर के बाद दलितों के लिए प्रभावी ढंग से काम करने वाले की बनाई गई। भारत में दलितों पर अत्याचार विषय से जुड़ी मार्टिन मक्वान की एक रिपोर्ट को नोत्रदाम के क्रोक इंस्टीट्यूट ने सराहा। इस संगठन की वैश्विक शाखाएं हैं। इससे इस विषय को अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप दिया गया। विश्व के कई रेडियो स्टेशनों और टीवी चैनलों ने इस

Scanned by CamScanner

विषय को हाथोंहाथ लिया। पॉल दिवाकर ने मांग की कि विश्व बैंक जैसे बहुराष्ट्रीय संगठनों को भी यह विषय उठाना चाहिए।

इसमें ध्यान में लेने जैसा विषय एक ही है कि अटल जी के प्रधानमंत्री रहते समय अगर ये संगठन इतने आक्रमक हो गए थे, तो आज जब विश्व के कई देश भारत की सराहना करने में अपना कल्याण मान रहे हैं, ऐसे में उनके लिए इतिहास को नजरअंदाज करना आसान नहीं होगा। यूरोपीय देशों द्वारा भारत में विभाजनवाद का विरोध करने वाली बहुमत वाली सरकार पहली बार आई है, ऐसे समय में यह ध्यान देना आवश्यक हो जाता है कि आखिर इन संगठनों की असल मंशा क्या है। यूरोपीय देशों ने आज तक तीसरी दुनिया के किसी गरीब देश की किसी भी समस्या को सुलझाया नहीं है बल्कि उस समस्या पर राजनीति करते हुए उस देश में विभाजन के बीज कैसे बोने हैं, इसी विचार को पुख्ता किया है। इस लिहाज से डर्बन परिषद आज भी अध्ययन योग्य उदाहरण है।

धर्मांतरण से राष्ट्रांतरण और घर वापसी

भारत में जिन राज्यों में धर्मांतरण से राष्ट्रांतरण के प्रयास हुए, उनमें तमिलनाडु, ओडिशा, नगालैंड, मिजोरम एवं मेघालय प्रमुख हैं। हालांकि ऐसा बिल्कुल

Scanned by CamScanner

इन्क्विजिशन : एक एक आदमी को ले के बड़ा नरसंहार दुनिया में ईसाईयत फैलाने का सब से बड़ा मार्ग रहा

नहीं है कि धर्मांतरण से राष्ट्रांतरण की समस्या इन्हीं राज्यों तक सीमित है। देश का प्रत्येक राज्य इस समस्या से जूझ रहा है, लेकिन जिन राज्यों में यह गंभीर रूप ले चुकी है और जहां के उदाहरणों का विस्तृत अध्ययन किया जा सकता है, उनमें उपरोक्त राज्य समाविष्ट हैं। किसी इलाके में पहले वहां के आर्थिक हालात, सामाजिक समस्याओं तथा राजनीतिक स्थिति के संदर्भों के सहारे धर्मांतरण के प्रयास होते हैं। 500 वर्ष पूर्व गोवा में धर्मांतरण के लिए भयानक नरसंहार हुआ था। आज वे तथ्य सच नहीं लगेंगे, लेकिन जिस तरह किसी आरा मशीन में डालकर लकड़ी के छोटे टुकड़े किए जाते हैं, वैसे ही धर्मांतरण के लिए आतंकित करने हेतु हजारों लोगों के टुकड़े किए गए। पुर्तगाली सेना की मदद से नरसंहार, क्रूरतम अवमानना और असीम प्रताड़ना के बाद लोगों का हजारों की संख्या में धर्मांतरण हुआ। धर्मांतरण की इस प्रक्रिया को इन्क्विजिशन नामक संज्ञा दी गई। इस तरह की प्रताड़ना के लिए कौन-से यंत्र प्रयुक्त किए गए और उनके कौन से प्रकार थे, इस सबको दर्शाने वाले चित्र भी उपलब्ध हैं। जिन देशों में 500 वर्षों तक यूरोपीय सत्ता रही, उन सभी देशों में धर्मांतरण इन्क्विजिशन से हुआ है। इन 125 देशों में आज भी यूरोपीय

Scanned by CamScanner

श्वेतवंशीय अथवा कृष्णवंशीय के सम्मिश्रण से बनी हुई प्रजा निवास करती है। उन सबके इतिहास को भले ही संबंधित यूरोपीय देशों द्वारा मनोहर पृष्ठभूमि में रंगा गया हो, लेकिन यह इतिहास गोवा से कुछ अलग नहीं है। पिछले 500 वर्षों में पूरे विश्व में इन्क्विजिशन के हजारों मामले हुए हैं और उनमें से अधिकांश संबंधित देशों में यूरोपीय देशों की सत्ता को स्थिर कराने की खातिर हुए। जमीन पर उसका असर था संबंधित देशों पर थोपी गई गुलामी, लेकिन धर्मांतरण और राष्ट्रांतरण के लिए इन्क्विजिशन एकमात्र मार्ग नहीं है। कुछ स्थानों पर संबंधित माहौल के अनुरूप धर्मांतरण और बाद में कुछ वर्षों बाद राष्ट्रांतरण जैसे प्रयोग भी हुए। कई देशों में ये प्रयोग आज भी जारी हैं।

इसमें तमिलनाडु का जो उदाहरण हमारे सामने है, उसमें धर्मांतरण से राष्ट्रांतरण की प्रक्रिया देखने को मिलती है। इस विषय पर इस पुस्तक द्वारा डाली गई रोशनी इस राज्य की घटनाओं को अधिक महत्व देती हैं। इससे देश के हरेक राज्य की घटनाओं का भी जायजा मिलता है। तमिलनाडु में यह प्रक्रिया शायद पूरी न हुई हो, लेकिन उसे लगातार जारी रखा गया। 2001 में इसके लिए वैश्विक स्तर पर कुछ लोगों को एक साथ आमंत्रित कर परिषद में प्रस्तुत किया गया था। विषय था 'द्रविड़ धर्म में जातिगत ऊंच-नीच का भेद नष्ट करने की ताकत।' इसमें यह दिखाना था कि द्रविड़ हिंदू धर्म से अलग धर्म है। अगले वर्ष डर्बन में राष्ट्र संघ अर्थात् यूनाइटेड नेशन्स के तत्वाधान में 'देश-विदेश में वांशिक अत्याचार' विषय पर हुई अन्तर्राष्ट्रीय परिषद में विषय रखा गया कि 'भारत ही विश्व में वंशवाद की जननी है'। 2004 के एक प्रकाशन में दावा किया गया कि भारत द्रविड़ ईसाई देश है और ईसाइयों ने ही संस्कृत की उत्पति की है। यह सब करने वाली संस्था स्वाभाविक रूप से एक ही थी। उसके अगले वर्ष एक प्रस्ताव पारित हुआ कि द्रविड़ियन क्रिश्चियनिटी भारत में एक स्वतंत्र देश की भूमिका निभाती है और वह देश स्वतंत्र गणराज्य हो, इसलिए पूरे विश्व में विद्रोही आंदोलन शुरू करने चाहिए। उसके अनुसार विश्व के 50 से अधिक स्थानों पर संस्थाएं गठित की गईं। इस तरह अलग देश के गठन हेतु हम किसी भी स्तर तक जा सकते हैं, यह जताने के लिए एलटीटीई के रूप में प्रत्यक्ष आक्रमण की योजना बनाई गई। विश्व के कई देशों से उसके लिये समर्थन प्राप्त करने का प्रयास शुरू हुआ। इसमें लगभग एक लाख लोग मारे गए जिसके समर्थकों में अमेरिकी अध्यक्ष के सलाहकार भी शामिल थे। वर्ष 2006 में पोप के भाषण में भी इसका उल्लेख होने लगा। धीरे-धीरे यह भूमिका बनाई जाने लगी कि भारत में द्रविड़ लोग कुछ हजार

Scanned by CamScanner

वर्ष पूर्व हिंद महासागर में स्थित लेमुरिया नामक एक प्रदेश से आए, जो आज अस्तित्व में नहीं है। यह प्रदेश अफ्रीका के कृष्णवंशीय लोगों के वंशजों का निवास स्थान था जो यूरोप के नोहा के शापित बेटे हाम के वंशज थे और काले हो चुके थे। बाद में सन् 2008 में पहली अन्तर्राष्ट्रीय परिषद के जरिए तमिल लोगों का धर्म विषय पर पूरी दुनिया में आंदोलन खड़ा करने की भूमिका निश्चित की गई। यह विवरण भले ही एक बड़े देश के एक छोटे राज्य में विद्रोही आंदोलन खड़ा करने का हो, लेकिन धर्मांतरण से राष्ट्रांतरण की प्रक्रिया दर्शाने वाला है। हालांकि नगालैंड, मिजोरम, मेघालय, ओडिशा जैसे राज्यों के विवरण अलग होंगे, लेकिन क्रम और सिद्धांत आमतौर पर वही है। भारत का हरेक राज्य इसी प्रक्रिया में किसी ना किसी तरह बिठाया गया है। ऐसा नहीं कि यह केवल भारत के राज्यों की स्थिति है बल्कि दुनिया के कई देशों की यही स्थिति है। यूरोपीय गुलामी भुगत चुके 125 देश धर्मांतरण से राष्ट्रांतरण के स्वतंत्र उदाहरण हैं।

'घर वापसी' शब्द के उच्चारण मात्र से कुछ राजनेताओं को ऐसा लगता है, मानों हम मध्ययुग में जी रहे हों। लेकिन दुनिया के 50-60 देशों में आज घर वापसी भी संभव नहीं है, क्योंकि वहां इन्क्विजिशन के माध्यम से 100 प्रतिशत धर्मांतरण करवाकर 100 प्रतिशत राष्ट्रांतरण पर मुहर लगाई गई है। बेशक आज वहां यूरोपीय आधिपत्य न हो, लेकिन यह भी नहीं कहा जा सकता कि वहां के लोगों को पूरी स्वतंत्रता प्राप्त है। कई देशों में आज भी यूरोपीय सत्ताधारियों की अगली पीढ़ियां सत्तासीन हैं। दक्षिण अफ्रीका जैसे देशों में तो 25 वर्ष पहले तक कृष्णवंशीय लोगों की सहभागिता भी नहीं थी।

जिन देशों में आज घर वापसी पर विचार भी नहीं किया जा सकता, ऐसे देशों की संख्या बड़ी है। वहां की समस्याएं भी कम नहीं हुईं। दक्षिण अफ्रीका के आर्चबिशप डेसमंड टूटू ने एक ईसाई धर्मगुरु होने के उपरांत भी इस संदर्भ में जो संघर्ष किया, वह ध्यान देने योग्य है। वे कहते हैं, **'कुछ सदियों पूर्व हमारे अफ्रीकी देशों में जब ईसाई मिशनरी आए, तब उनके हाथों में बाइबिल थी और इस विशाल अफ्रीकी भूमि पर हम निश्चिंत होकर रह रहे थे। उन मिशनरियों ने हमारे हाथों में बाइबिल दी और आंखें बंद करने को कहा। इस महाद्वीप के करोड़ों लोगों ने उन पर भरोसा रखकर आंखें बंद कीं लेकिन जब हमने आंखें खोली तब पाया कि हमारे हाथों में केवल बाइबिल बची है, लेकिन यहां की हरेक चीज उनके हाथों में जा चुकी है।'** आर्चबिशप टूटू का यह वाक्य सिर्फ उनका

Scanned by CamScanner

ही नहीं बल्कि प्रत्येक अफ्रीकी नागरिक का है। वहां किसी नगर निगम का चुनाव हो अथवा किसी देश की संसद का चुनाव, यूरोपीय वर्चस्व के विरोध में आवाज उठाने के प्रयास में वहां इन वाक्यों का प्रयोग किया जाता है। उन देशों की समस्याएं भारत से भी अधिक हैं। उन्हें यह सुनना पड़ता है कि यूरोपीय लोगों की गुलामी करने के लिए ही उनका जन्म हुआ है। इसी कारण उन देशों में गुलामी परंपरा शुरू हुई। वहां के जंगलों में घूमने वाले लोगों को किसी जानवर की तरह पकड़ना, उन्हें रस्सी से बांधकर यूरोप, अमेरिका के बाजारों में बेचना, जहाज से उन्हें यूरोप, अमेरिका ले जाना। यात्रा के दौरान किसी ने विरोध किया तो उसे नीचे फेंक देना...! यह कहानी कुछ हजार अथवा लाखों लोगों तक सीमित नहीं बल्कि यह संख्या कई करोड़ों में है। यह प्रक्रिया कई सदियों तक जारी रही। लेकिन घर वापसी की चर्चा आज सिर्फ धर्म के संदर्भ में सामने आ रही है, बाइबिल का प्रचार सिर्फ वहां गुलामी लादने का साधन था। यूरोपीय लोगों का मूल उद्देश्य संसाधनों की लूट था, जो कि आज भी जारी है। भारत में आज घर वापसी शब्द का उच्चारण करना संभव है, पर अफ्रीका में जिन्होंने इसका उच्चारण किया, उन पर नरसंहार के हथियार का प्रयोग किया गया। पिछले 500 वर्षों में यह मामला कितने बड़े पैमाने पर फैला होगा, इसकी थोड़ी-बहुत जानकारी ही इतिहास में दर्ज है। यह भी सच्चाई है कि वह इतिहास भी अभी तक ठीक से लिखा ही नहीं गया। ऐसी घटनाएं अभी भी अफ्रीका में घट रही हैं। आज से बीस वर्ष पूर्व ही रवांडा में ऐसा प्रयास हुआ था जिसमें 10 लाख लोगों को मौत के घाट उतार दिया गया था। आज भले ही ईसाई मिशनरी यह कहें कि रवांडा का वह नरसंहार तुत्सी और हितू समुदायों का आपसी टकराव था, लेकिन इस नरसंहार के आरोपी कौन हैं,

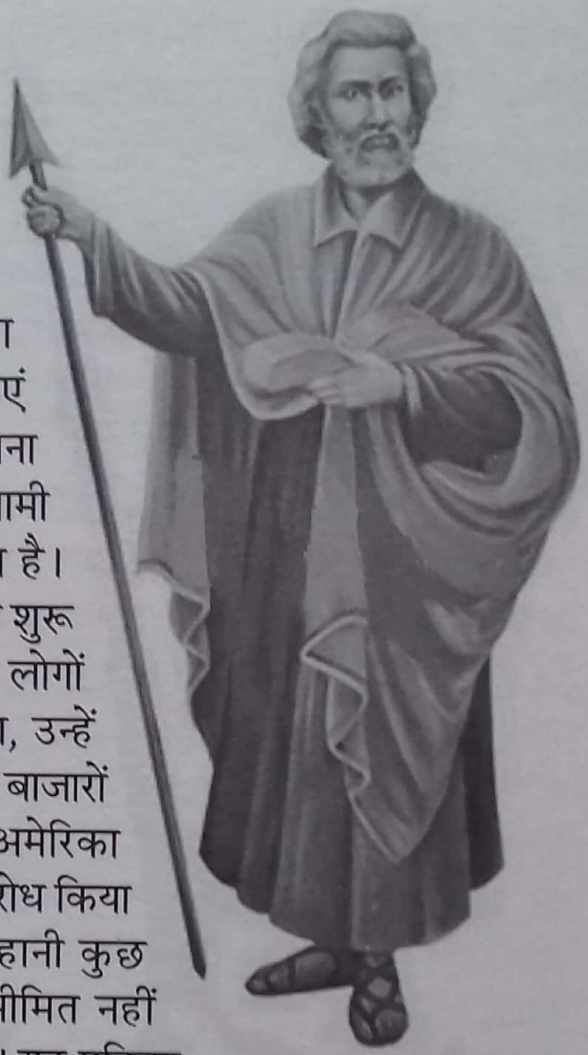

सेंट थॉमस : जिसका इतिहास में कोई विश्वासी आधार नही

Scanned by CamScanner

इस पर आज कई पुस्तकें उपलब्ध हैं और वेबसाइटों पर भी पर्याप्त जानकारी मौजूद है। इस पुस्तक में इस संबंध में उपलब्ध जानकारी सभी अफ्रीकी देशों के लिए सहायक होगी।

तमिल, द्रविड़, अनार्य जैसे शब्दों के प्रयोग से मिशनरियों ने जिस तरह भारतीय लोगों को डर्बन से लेकर जेनेवा तक और न्यूयॉर्क से कोपेनहेगेन तक भटकाए रखा है, उसी तरह अफ्रीकी लोगों को भी भटकाए रखा गया है।

धर्मांतरण से राष्ट्रांतरण के दक्षिणी सूत्रधार

ईसाई मिशनरियों और ब्रिटिश साम्राज्य ने तमिलनाडु को एक ईसाई राज्य बनाने हेतु जिस तरीके का प्रयोग किया, उसे देखने पर उनकी आक्रमणकारी मानसिकता का विज्ञान स्पष्ट होता है। इस विषय के इतने सूक्ष्म पहलू हैं कि उन्हें गंभीरता से देखने पर ही उनकी गहनता स्पष्ट हो पाएगी। मिशनरियों एवं ब्रिटिशों का आक्रमण हर तरफ राष्ट्रघातक है, लेकिन कुछ ही स्थानों पर उनके आक्रमणों के प्रयासों की सुरचना ध्यान आती है। किसी भी अभियान को कई सदियों तक जारी रखना कठिन होता है। उसमें उसकी दीर्घकालीन रचना स्पष्ट होती है। लिहाजा कई सदियों के सुरचित आक्रमण का प्रत्युत्तर देने की जिम्मेदारी जिन लोगों को लेनी है, उन युवाओं को उसका उतना ही बारीकी से अध्ययन करने की आवश्यकता है।

जब किसी सत्य को लोगों के सामने रखना होता है, तो उस विषय को प्रस्तुत करने की आक्रामकता धीरे-धीरे बढ़ानी पड़ती है। भारत के दक्षिण में रहने वाले लोग आर्यों द्वारा किए गए आक्रमण के फलस्वरूप दक्षिण में धकेल दिए गए स्थानीय भूमिपुत्र हैं और वे ही मूलतः यूरोप से अफ्रीका के मार्ग से आने वाले मूल हेमेटिक ईसाई हैं, यह जताने के लिए उन्होंने जिस तरीके का प्रयोग किया उससे इस आक्रमण की सुरचना स्पष्ट होती है। तमिलनाडु के आर्चबिशप डॉ. देवनायकम ने इस मुहिम की अगुआई की। इस विषय को लोगों के सामने रखने के लिए उन्होंने सन् 2000 में मुहिम शुरू की। विषय था 'द्रविड़ धर्म' में ही भारत की जातिप्रथा का निर्मूलन करने

Scanned by CamScanner

की क्षमता है। इसके अगले वर्ष ऐसी परिषद के जो विषय रखा गया था, वह था 'भारत ही द्रविड़-ईसाई स्थान' है। इस विषय को वैश्विक स्तर के कई प्रकाशनों में प्रस्तुत किया गया। उसके बाद की परिषद सन् 2005 में हुई जिसका विषय था- 'भारत के शैविज्म और वैष्णविज्म पंथ।' वहीं 2006 में हुई परिषद का विषय था- 'द्रविड़ीय ईसाइयत को वैश्विक स्तर पर रखने की आवश्यकता'। इसमें महत्वपूर्ण बात यह है कि इस परिषद में उस वर्ष अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज डब्ल्यू. बुश के सलाहकार उपस्थित थे। उसके बाद का विषय था - 'भारत में दो हजार वर्षों की ईसाइयत का इतिहास'। तो 2008 की परिषद का विषय था- 'द्रविड़ी ईसाई धर्म का दक्षिण भारतीय साहित्य, कला, उपासना, मूर्तिकला, नृत्यशैली पर असर।'

पहली ही परिषद में यह प्रस्तुति की गई कि संस्कृत भाषा भारत में सेंट थॉमस के साथ यूरोप से आई। दक्षिण भारत में जो संस्कृत साहित्य उपजा, वह सब उसके बाद निर्मित हुआ। संस्कृत भाषा मूलतः ग्रीक एवं लैटिन भाषा से उपजी है। उसी संस्कृत साहित्य से इस भूमि को पहले-पहल उच्चतम दर्जे का धार्मिक विचार मिला, लेकिन आदि शंकराचार्य ने उसे विकृत करते हुए उसमें जातीयता का समावेश किया। दक्षिण भारत में सेंट थॉमस के माध्यम से पहले आदर्श धर्मविचार रखा गया, लेकिन उत्तर के चालाक आर्य ब्राह्मणों ने उसमें छूत-अछूत की प्रथा डाली। दक्षिण में आने वाले ईसाई अफ्रीका से आए थे, इसलिए वे स्वाभाविक ही काले थे, अतः आर्य ब्राह्मणों ने उनका तिरस्कार करते हुए उन्हें बहिष्कृत किया। काले लोगों का तिरस्कार करने वाली यह छुआछूत हर तरफ फैले, इसके लिए आदि शंकराचार्य ने भारत में चारों दिशाओं में चार मठ स्थापित किए। ये मठ चूंकि छुआछूत समर्थक दृष्टिकोण के परिचायक हैं, इसलिए उन्हें शीघ्रातिशीघ्र नष्ट करना आवश्यक है। इस विषय को सबसे पहले दिव्यनायकम् नामक मिशनरी ने पहली परिषद में रखा। उधर आर्य ब्राह्मणों ने बौद्ध, जैन, वैष्णवों पर कब्जा कर लिया, जो पहले द्रविड़ थे, और दक्षिण भारतीय भक्ति साहित्य का अपनी भाषा में रूपांतरण कर उसके प्रचार के लिए नौवीं सदी में चार मठों के द्वारा उनकी प्रस्तुति की।

देवकला नामक मिशनरी द्वारा सन् 2004 में लिखित 400 पन्नों वाली पुस्तक का नाम ही था, थॉमस द्रविड़ ईसाई देश। ईसाई मिशनरियों द्वारा भारत में प्रचार हेतु मार्गदर्शन के अनुरूप यह पुस्तक प्रकाशित की गई थी। इसमें कहा गया था कि धूर्त आर्य ब्राह्मणों ने उस समय के भोलेभाले द्रविड़ सत्ताधारियों के समक्ष अति सम्मोहक नशीली आदतें, सुन्दर महिलाओं के आकर्षण के

Scanned by CamScanner

जरिए अपने दर्शन को उन पर थोपा। ईसाई दर्शन के भक्ति मार्ग से आए हुए परमेश्वर का वर्णन पहली बार 'अहं ब्रह्मास्मि' इन शब्दों में रखा गया था जिसका सही अर्थ था 'परमेश्वर मुझमें है'। पर शंकराचार्य ने इसकी एकदम गलत रूप से व्याख्या की 'मैं ही ईश्वर हूं'। इसी पुस्तक में आगे कहा गया था कि सेंट थॉमस के अनुयायियों ने अपने विचारों का प्रसार करने हेतु संस्कृत भाषा बनाई।

सेंट थॉमस से वास्को डि गामा के समय में यहां ईसाइयत किस हालत में थी, इस बारे में 2005 की परिषद में देवनायकम् ने एक पुस्तक लिखी थी। अमेरिका में प्रसारित उस पुस्तक में कहा गया कि इसे मैं आपको यानी मिशनरियों को एक अनूठी भेंट दे रहा हूं जिसके माध्यम से ईसा का संदेश पूरे विश्व में और खासकर पूरे भारत में फैलाने में मदद मिलेगी। इस पुस्तक का विषय था- महायान बौद्ध पंथ, जैन पंथ एवं शैव पंथ आदि दर्शन ईसाई विचारों से ही साकार हुए हैं। तमिलनाडु में तिरुवल्लूवर नामक महान् ऋषि हुए थे जिनका काल ईसा पूर्व तीसरी सदी से पहली सदी का माना जाता है। उनके ग्रंथ तिरुकुरल में उत्तर भारत के संदर्भ कम हैं, परंतु जो हैं, वे स्पष्ट रूप से कहते हैं कि भारतीय सभ्यता एकरस है। फिर भी ऐसे संदर्भों के कम होने का आधार लेकर पहले यह प्रस्तुति की गई कि यह द्रविड़ कवि हैं जिसका उत्तर भारत की आर्य सभ्यता से कोई संबंध नहीं है। बाद में एक ईसाई प्रचारक की पुस्तिका पर तिरुवल्लूवर को सेंट थॉमस की बातें कान देकर सुनते हुए दिखाया गया था। ऐसे ही एक चित्र में दक्षिण भारत में ब्राह्मण लोग जिस तरह से केशरचना करते हैं, उस तरह की रचना वाले व्यक्ति को उस व्यक्ति का प्रत्यक्ष वर्णन किए बिना, गेरुए रंग के कपड़े पहने हुए सेंट थॉमस का खून करते हुए दिखाया गया था।

इससे मिशनरियों ने जिन बातों को साध्य करने का लक्ष्य सामने रखा, वह यह कि हिंदू धर्म एवं संस्कृत भाषा का सृजन सेंट थॉमस के ईसाई विचारों से हुआ। यही नहीं, यह भी कहा गया कि बौद्ध एवं जैन जैसे अन्य भारतीय धर्मों की उत्पति भी उसी से हुई है। चीन जैसे विशाल देश के साथ दुनिया में बौद्ध मतावलंबियों की संख्या लगभग 150 करोड़ है। जब ये विषय वैश्विक स्तर की परिषदों में रखे जाते हैं, तब उनका हवाला विश्व के अन्य कोनों में संदर्भ सामग्री के तौर पर दिया जाता है। हिंदू धर्म एवं संस्कृत भाषा की उत्पत्ति सेंट थॉमस के ईसाई प्रचार वाले साहित्य से हुई, इसलिए बौद्ध विचारों एवं उसके लिए प्रयुक्त भाषा की उत्पत्ति उसी से हुई है, इस तरह के विचार जब हिलेरी

Scanned by CamScanner

क्लिंटन की जुबान से उपजते हैं, तब उनका असर भी बदलता है। जिस समय हिलेरी क्लिंटन पहली इंटरनेशनल परिषद में उपस्थित थीं, तब वे अमेरिकी सीनेट की सदस्य थीं।

21वीं सदी के पहले एक दशक में हुई ये छह परिषदें कई सदियों से लगातार जारी एक प्रक्रिया का हिस्सा हैं। दरअसल जब कोई विषय सारी दुनिया की घटनाओं पर नजर रखने वाले कूटनीतिक लोगों अर्थात् वर्ल्ड डिपलोमैट कम्युनिटी के समक्ष रखा जाता है, तब उसे व्यापकता से रखना होता है। हालांकि विषय कितना गहरा है, इसे परखने का किसी के पास समय नहीं होता, लेकिन विश्व के किसी जनसंख्या समुदाय का अपनी समस्याओं के बारे में क्या कहना है, इसका संज्ञान वे जरूर लेते हैं। तमिल लोगों की समस्याएं सामने रखने के दृष्टिकोण से इस विषय की शुरुआत हुई। आर्य ब्राह्मणों ने उन पर अन्याय किया, यह कहकर उन्हें भारतीय समाज से निकाल कर वैश्विक समाज का संदर्भ देने की औपचारिकता पूरी की गई। बाद में 'द्रविड़ संस्कृति सेंट थॉमस के विचारों से ही उपजी', संस्कृत भाषा और यहां के साहित्य का सृजन भी बाद में हुआ आदि विषयों पर वैश्विक परिषदें होने लगीं। इनमें से हरेक परिषद विश्वस्तरीय थी। उसके प्रत्येक विषय के लिए समर्पित विश्वस्तरीय संस्था थी, जो सुनियोजित रूप से खड़ी की गई थी। यही नहीं, द्रविड़ों को विद्रोह कर अपना अलग अस्तित्व खड़ा करना है, यह बताया जा रहा था।

ऐसा नहीं कि फिलहाल इस विषय को लेकर कोई वैश्विक आंदोलन शुरू हो गया हो, परंतु उसकी तैयारी लगातार चलती रहती है। यूरोप के प्रत्येक देश में आज तमिल लोगों को स्वतंत्र दर्शाने वाली संस्थाएं व संगठन खड़े हैं। कई विश्वविद्यालयों में इस विषय का स्वतंत्र अस्तित्व है। इंस्टीट्यूट ऑफ एशियन स्टडीज, द्रविड़ियन स्पिरीचुअल मूवमेंट जैसी संस्थाएं यूरोप के हर देश में मिलेंगी। भारत के छोटे-बड़े दुश्मन होना स्वाभाविक है। अनुकूल मौका मिलने पर ये खड़े तो होंगे ही, परंतु उन्हें उन्हीं की भाषा में उत्तर कैसे देना है, इसका विचार भी हमें लगातार करना होगा। इस विषय के कुछ अन्य पक्ष भी हैं जिन पर अलग से चर्चा करनी होगी।

ल्युथेरन पंथ के सपने

पिछले 10 वर्षों में भारत के ईसाई संगठनों ने धर्मांतरण के लिए अत्यंत आक्रमक भूमिका अपनाई है जिस कारण देश के समक्ष बड़ी चुनौती है।

Scanned by CamScanner

विदेशों के अनुकूल आतंकी, उन्हें समर्थन देने वाली विदेशी संस्थाएं तथा साथ ही प्रत्येक ईसाई संगठन किस तरह स्वतंत्र रूप से भारत के विरोध में सक्रिय हैं, यह देखना उतना ही महत्वपूर्ण है। आज से 60-70 वर्ष पूर्व यूरोपीय देशों के हाथ से निकले हुए देशों पर पुनः नियंत्रण पाना, यह उनका लक्ष्य होता है। इसलिए आज तक भारत से छीनी हुई पूंजी के एकाध प्रतिशत ब्याज से ही यह सब कार्य चलते हैं। पोप नियंत्रित केथोलिक संगठन के कई मामलों से हम परिचित होते हैं। भारत में इसकी जड़ें गहरी हैं। वर्ष 1999 में, तत्कालीन पोप जोन पॉल द्वितीय ने एक परिषद आमंत्रित कर यह वक्तव्य दिया था कि अगली सहस्राब्दी एशिया की होगी और उसका आरंभ अगले 100 वर्षों में भारत के ईसाईकरण से होगा। हाल में हरेक गांव-देहात में उनके प्रचारक काम करते हुए दिख रहे हैं। शहरी इलाकों में कोई झुग्गी बस्ती ऐसी नहीं होगी जहां ऐसे प्रचारक नहीं दिखते। भारत की गरीबी, बेरोजगारी, अज्ञान का लाभ उठाकर कई जिले शत-प्रतिशत ईसाईकरण की दिशा में मुड़े हैं। इसमें जिस तरह कैथोलिक संगठन महत्वपूर्ण काम कर रहे हैं, उसी तरह प्रोटेस्टेंट भी पीछे नहीं हैं। उनके बैपटिस्ट पंथ ने ही पूर्वोत्तर में धर्मांतरण से राष्ट्रांतरण का कार्यक्रम चलाया है। यह पुस्तक ल्युथेरन पंथ के समावेश को लेकर चेताती है। उन्होंने भारत में लोकप्रियता प्राप्त करने हेतु ही 'गुरुकुल' शीर्षक को प्रयुक्त किया है। हमारे यहां धर्मांतरण की समस्या अभी भी राष्ट्रीय समस्या नहीं मानी जाती है, लेकिन इस संस्था ने पिछले वर्ष वर्ल्ड काउंसिल ऑफ चर्चेज नामक विश्वस्तरीय संगठन में अन्तर्राष्ट्रीय दलित विषय प्रस्तुत किया था। इस संगठन की पृष्ठभूमि है दलितों की समस्याएं सुलझाना अर्थात् उनका धर्मांतरण कर स्वतंत्र दलितस्तान की मांग करना।

ल्युथेरन पंथ आक्रामक तरीके से धर्मांतरण की ओर अग्रसर है। भारत में इस पंथ की जड़ें जमे हुए 300 वर्ष बीत चुके हैं। इस पंथ का कार्यक्षेत्र मुख्य रूप से तमिलनाडु एवं दक्षिणी राज्यों में है। आज से लगभग 70 वर्ष पूर्व और उसके बाद भी महात्मा गांधी ने इस पंथ के लोगों से धर्मांतरण न करने के लिए अपील की थी। तत्कालीन बिशप जोहान्स संडेग्रेन ने उसे न

Scanned by CamScanner

केवल नकार दिया, बल्कि आलोचना भी की कि महात्माजी धर्मांतरण रोककर जहर फैला रहे हैं। गांधी के इस प्रयास का दक्षिण भारत में बड़े पैमाने पर स्वागत हुआ था। उसमें कई ईसाई संगठन भी थे, लेकिन ल्युथेरन पंथियों को डर था कि यह विरोध और बढ़ेगा। उन्हीं दिनों डॉ. भीमराव आंबेडकर भी हिंदुओं में अछूत प्रथा का नाश करने की दिशा में काम कर रहे थे। बिशप संडेग्रेन को लगता था कि उनका कार्य भी ल्युथेरन पंथ के लिए कष्टदायक होगा। उन्हें इसी बात का अंदेशा था कि अगर दलित और शेष हिंदुओं का भेद समाप्त हो गया तो धर्मांतरण बाधित होगा। ल्युथेरन पंथ का कार्य आज पूरे देश में चल रहा है। फिर भी तमिलनाडु में उनके द्वारा किया गया कार्य है कि ईसाई मिशनरी कितने आक्रमक हो सकते हैं। लगभग 400 वर्ष पूर्व मार्टीन लूथर नामक एक जर्मन विचारक ने ईसाई धर्म के पापमुक्ति के प्रमाणपत्रों के विरोध में एक अलग पंथ की स्थापना की थी। इस भूमिका से जिस पंथ की स्थापना हुई थी, उस पंथ ने भारत में धर्मांतरण के लिए अतिवादी मार्ग को स्वीकार किया। इसी का परिणाम था कि पिछली सदी में ब्रिटिश जड़ें भारत में गहरे तक पैठ जमा सकीं। गुरुकुल ल्युथेरन संस्था की विशेषता यह है कि ब्रितानिया को अपना साम्राज्य खड़ा करने में जिस सेरामपुर कॉलेज ने पूरी सहायता की, वह उससे संबंधित थी। इस संदर्भ में एम. हजारिया और एम. एम. थॉमस के नाम महत्त्वपूर्ण हैं। तमिल लोगों को भारत से अलग परिचय रखने की जरूरत है, इस विषय को उन्होंने हरेक विश्व स्तरीय मंच पर रखा। भारत में इस पंथ की गतिविधियां सन् 1706 में शुरू हुई थीं। भारत के विरोध में यूरोप एवं खासकर संयुक्त राष्ट्र में मुहिम खोलने में यह संगठन हमेशा आगे होता है। भारतीय समाज विभाजित हो और ईसाईकरण के लिए अनुकूल माहौल बने, यह इस संगठन का लगातार प्रयास रहा है। यूरोप के प्रमुख देशों, अमेरिका स्थित संस्थाओं और बड़े वैश्विक संगठनों से इस संगठन को बड़े पैमाने पर अनुदान मिलता है। भारतीय समाज में जो घटक विभाजनवादी स्वभाव वाले हैं, उन्हें संगठित करना, उनसे संपर्क साधना और उन्हें यूरोप के अन्य ईसाई संगठनों से जोड़ना, उनका प्रयास रहता है।

भारत में इस पंथ का प्रचार 1706 में बथोलोमा जिगेनबाल्ग नामक मिशनरी ने शुरू किया। उसे डेनमार्क के राजा फ्रेडरिक चतुर्थ ने यह काम करने हेतु भेजा था। भारत में प्रोटेस्टेंट पंथ का यह पहला काम था। पहले कुछ वर्षों तक उसने यह प्रशंसा शुरू की कि हिंदू अत्यंत शांत स्वभाव

Scanned by CamScanner

वाले, सज्जन और प्रामाणिक हैं। एक बार उनका भरोसा प्राप्त करने के बाद उसने हिंदुओं के दोष दिखाना और उनके धर्मांतरण के लिए माहौल बनाने का प्रयास शुरू किया। मूर्तिपूजा की आलोचना करना उसके काम का पहला चरण था। वह अपनी डायरी में लिखता है, मैं कई मंदिरों में मूर्तियां स्वयं गायब कर देता अथवा तोड़ देता था। वह कहता, मूर्तिपूजा मनुष्य को नपुंसक बनाती है और संकट से बचा भी नहीं सकती। उन लोगों को वह देहाती धर्म का पालन करने वाले लोग कहकर उलाहने देता। इस संस्था की 300वीं वर्षगांठ जर्मन राजदूत की उपस्थिति में मनाई गई तब जर्मनी के कुछ चर्च संगठनों से सामंजस्य करार किए गए थे।

यूरोपीय इतिहास के विरोध में विश्व संगठित हो

इक्कीसवीं सदी तक विज्ञान का विकास सूचना तकनीक, जैव विज्ञान और नैनो विज्ञान तक हो चुका है लेकिन आज भी विश्व का इतिहास 'वंशवाद' नामक दकियानूसी सिद्धांत पर ही निर्भर है। विश्व का विभाजन आज भी 'वंश' सिद्धांत पर ही आधारित है। यह सिद्धांत कहता है कि आज के विश्व का विस्तार नोहा की कहानी के आधार पर तुर्किस्तान के अरावत पर्वत से हुआ है,यह कहानी जेनेसिस में है। उसी को आधार मानकर आज विश्व के 80 प्रतिशत देशों की पाठशालाओं में यही इतिहास पढ़ाया जा रहा है। भारत भी इसका अपवाद नहीं है। यद्यपि तुर्किस्तान एशिया का हिस्सा है और यूरोप से सटा हुआ है, लेकिन यूरोप का इतिहास जेनेसिस, बाइबिल, मोजेस के इतिहासों पर ही निर्भर है। उसी के आधार पर यूरोपीय लोगों ने विश्व पर अपने वर्चस्व का इतिहास रचा है। पिछले 60-65 वर्षों में विश्व के 50-60 देशों के अध्ययनकर्ताओं ने इस इतिहास को चुनौती दी है। पिछले डेढ़ सदी से विश्व के विश्वविद्यालय जगत पर यूरोपीय विश्वविद्यालयों का ही प्रभाव है। इसी से आगे का इतिहास आज पढ़ाया जाता है। इसलिए जब तक इस इतिहास को ही चुनौती नहीं दी जाती, तब तक कोई भी देश अपना अलग इतिहास नहीं खोज पाएगा, यह सच्चाई है। पिछले 400-500 वर्षों में विश्व के तीन- चौथाई हिस्से पर यूरोपीय आक्रमकों का ही साम्राज्य रहा। पहले दो- तीन सौ वर्ष तक उन देशों ने लूट मचाई। उसके बाद इतिहास जैसे विषय की ओर गौर करना शुरू किया। कई सदियों तक लूट मचाने व लोगों को यंत्रणा देने के बाद उन्होंने यह इतिहास लादना शुरू किया, कि ''विश्व का इतिहास जेनेसिस पुस्तक में दिए हुए वक्तव्य से शुरू होता है''।

Scanned by CamScanner

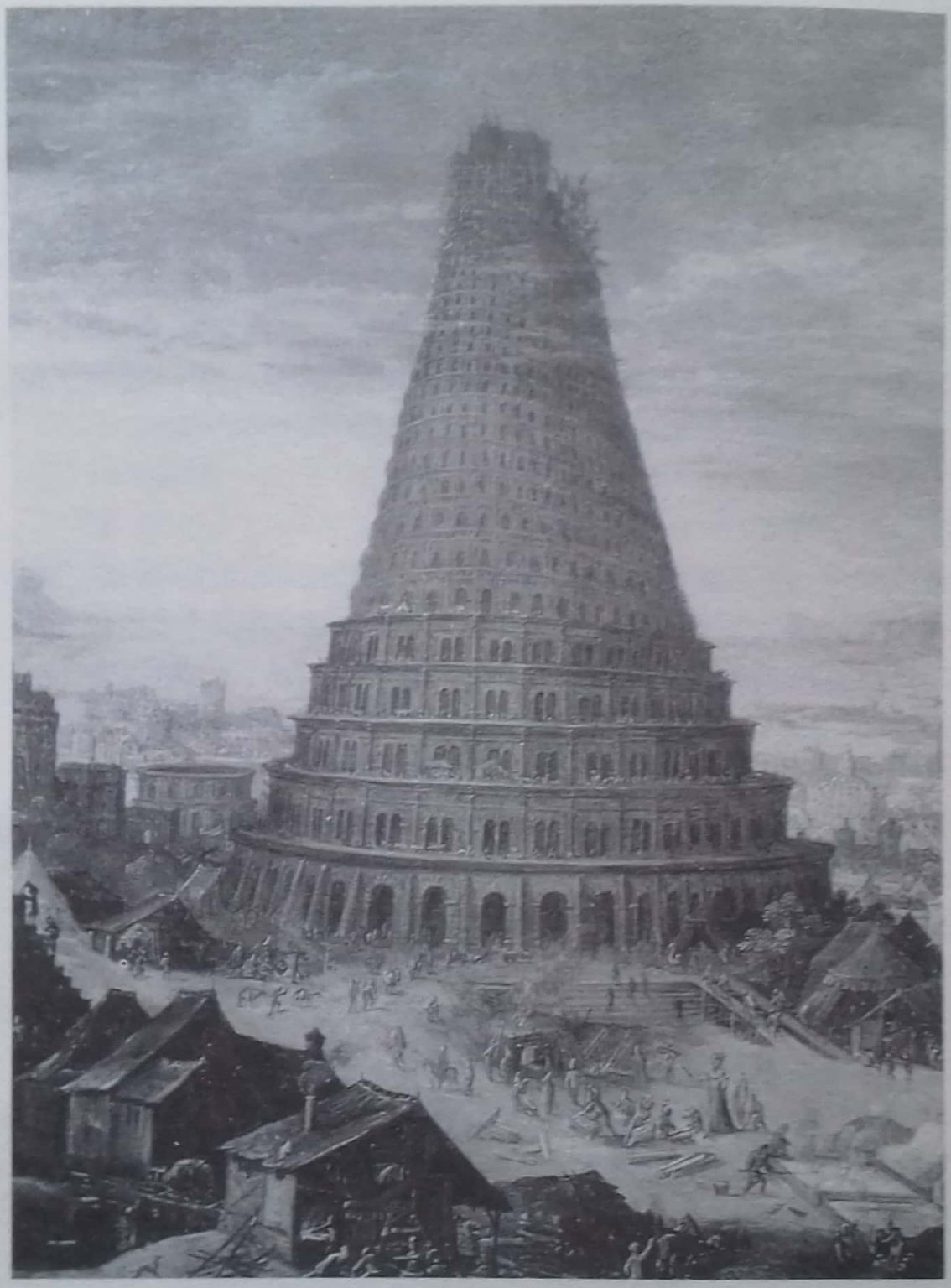

आर्य बाहर से आए और अनार्य दक्षिण में अफ्रीका से आए', यह उसी जेनेसिस पुस्तक के कथन का हिस्सा है। पूरे विश्व में हर देश ने जेनेसिस मिथक को उखाड़ फेंकने का प्रयास जारी रखा है उसे यदि संगठित रूप प्राप्त हो,तो ही उसके जल्द से जल्द फेंके जाने की संभावना है। विश्व के एक हजार से अधिक विश्वविद्यालयों ने पिछले 150-200 वर्ष इसी इतिहास को केंद्र में रखकर सभी संशोधन किए है? भारत के भी सभी विश्वविद्यालय इसी सूची में आते है।

Scanned by CamScanner

नोहा की कथा में यह उल्लेख है कि यूरोपीय लोगों को विश्व को लूटने का अधिकार है। उसी के आधार पर उन्होंने 'लूट के अधिकार वाला इतिहास' लिखवाया। आज भी विश्व के आधे से अधिक देशों की सरकारों, विश्वविद्यालयों, पाठ्यपुस्तकों और सरकारी कायदे-कानूनों के दस्तावेजों में भी वह उसी तरह जारी है। इतना ही नहीं, विश्व की बहुतांश भाषाओं के ज्ञानकोश में भी इस 'थ्योरी' को स्वीकार्यता मिल चुकी है। विश्व के अनेक देशों ने अब फिर से अपना स्वतंत्र इतिहास लिखना शुरू किया है। कुल मिलाकर आज भी विश्व पर यूरोपीय वर्चस्व का बोझ होने के कारण जेनेसिस के आधार पर तैयार किया गया इतिहास प्रचलन में है। इसे फेंक देने की हिम्मत बहुत कम देश दिखा पाए हैं। भारत भी आज तक उसका शिकार है। "आर्य बाहर से आए और अनार्य दक्षिण में अफ्रीका से आए", यह उसी 'जेनेसिस' पुस्तक के कथन का हिस्सा है। पूरे विश्व में प्रत्येक देश ने जेनेसिस मिथक को उखाड़ फेंकने का प्रयास जारी रखा है। उसे यदि संगठित रूप प्राप्त हो तो उसे जल्द से जल्द फेंके जाने की संभावना है। विश्व के एक हजार से अधिक विश्वविद्यालयों ने पिछले 150-200 वर्षों में इसी इतिहास को केंद्र में रखकर सभी संशोधन किए हैं। भारत के भी सभी विश्वविद्यालय इसी सूची में आते हैं।

जेनेसिस के टॉवर ऑफ बेवल, नोहा की कहानी और 18वीं सदी में विश्व को कुछ 'वंशों' की सूची में डालने का कौशल–इसी से यह इतिहास तैयार हुआ है। विश्व की हर संस्कृति में ऐसी कुछ कथाएं तो होती ही हैं। उस समय जो ज्ञात प्रदेश है, उसी को समस्त विश्व मानकर पूरा चिंतन किए जाने की संभावना होती है। लेकिन उसका दकियानूसीपन स्पष्ट होने के बाद उसे परे रखने की आवश्यकता है। यदि किसी चीज का उपयोग हो तभी उसे आगे खींचने का मानवीय स्वभाव सार्थक होता है। लेकिन यदि उससे किसी दूसरे को तकलीफ होती हो तो उन्हें ही वह सावधानी रखनी होती है। भारतीय भाषाओं का सृजन भारत में ही हुआ और उसमें संस्कृत की अहम भूमिका है, यह भारतीय सिद्धांत है। लेकिन संस्कृत सहित सभी भाषाओं की उत्पत्ति जेनेसिस की कहानी के टॉवर ऑफ बेवल से हुई है, इस सिद्धांत को यूरोपीय देशों द्वारा स्वतंत्र और संयुक्त प्रयास से गढ़े गए इस सिद्धांत कि, 'भारत में आर्य बाहर से आए' को गत सदी के अहम व्यक्तित्व डॉ. बाबा साहेब आंबेडकर ने पूरी शक्ति और तर्क से नकारा। विश्वविद्यालयों और विश्व पर राज कर रहे प्रमुख देशों ने स्वीकार किया है। लेकिन पिछले 60 वर्षों में डा. आंबेडकर का सिद्धांत

Scanned by CamScanner

सत्ताधारियों को महत्वपूर्ण प्रतीत नहीं हुआ।

एक लोककथा के मिथक के आधार पर अंग्रेजों ने भारत की सभी यंत्रणाओं में जिस इतिहास को जुड़वाया है वह अधिक गंभीर है। यह विषय केवल इतिहास तक सीमित नहीं है। भारत के प्रत्येक राज्य की भाषा, सांस्कृतिक माहौल, वहां का धार्मिक वातावरण, अलग-अलग जातियों के संबंध, संगीत, कला, लोककथा, धर्मग्रंथ इनमें से हर एक पर इसने असर जमाया है। अंग्रेजों का किया हुआ यह प्रयास कितना सुदृढ़ होगा, इसका जायजा 'ब्रेकिंग इंडिया' पुस्तक ने अत्यंत सशक्त रूप से लिया है। जेनेसिस एवं बाइबिल ग्रंथों के आधार पर उन्होंने विश्व को मुख्य रूप से तीन विभागों में बांटा है। ये विभाग नोहा की कहानी के आधार पर खड़े किए गए हैं। संक्षेप में कहें, तो नोहा की कहानी इस तरह है, 'बाइबिल के पूर्व समय में एक बार एक बड़ा प्रलय हुआ। उसमें केवल नोहा नामक व्यक्ति बचा। उनके मत में विश्व की आज की पूरी जनता नोहा की वंशज है। इस नोहा के तीन बेटे थे–साम, हाम एवं जेफेथ। एक बार इनमें से हाम ने अपने पिता नोहा को शराब पीकर निर्वस्त्र स्थिति में पड़ा पाया और वह हंस पड़ा, लेकिन दूसरे बेटे साम ने पिता की ओर पीठ कर यानी उन्हें निर्वस्त्र देखना टालते हुए पहनने को वस्त्र दिए। इससे नोहा साम पर खुश हुआ एवं हाम को उसने श्राप दिया कि वह अश्वेत बनेगा, दक्षिण की ओर जाएगा और उसके बच्चों को साम के बच्चों की पीढ़ियों तक सेवा करनी होगी।' इस कथा का प्रत्यक्ष परिणाम यह हुआ कि आधी से अधिक दुनिया आज सेमेटिक, हेमेटिक और जेफेथेटिक हिस्सों में बंटी है। भारत को उन्होंने एक ऐसा देश माना है जहां के आर्य सेमेटिक हैं, क्योंकि वे साम के वंशज हैं। अनार्य हेमेटिक हैं, क्योंकि वे अफ्रीका के मार्ग से दक्षिण भारत आए। भारत में आज हेमेटिक के लिए अनार्य, द्रविड़, तमिल, ये शब्द प्रयुक्त किए जाते हैं। भारत में कहीं भी साम-हाम शब्द नहीं दिखते। लेकिन तमिलनाडु ऐसा राज्य है जहां द्रविड़ एवं तमिल के संदर्भ को उन्होंने साम एवं हाम तक खींचा है। प्रत्येक राज्य की भाषा, सांस्कृतिक वातावरण, जातीय संबंध, संगीत, कला, लोककथा, धर्मग्रंथ, शिक्षण क्षेत्र, शासकीय इतिहास को यदि दस मुद्दों का क्रम मानें तो तमिलनाडु में 70-80 प्रतिशत हिस्सों पर इसका प्रभाव है। दक्षिण के कर्नाटक, आंध्र, केरल राज्यों में यह कहीं 30 प्रतिशत तो कहीं 60 प्रतिशत तक है। महाराष्ट्र में 20-25 प्रतिशत है। उत्तर में भी कहीं 20-25 प्रतिशत तो कहीं 40 प्रतिशत तक इसका

Scanned by CamScanner

असर हुआ है। भारत में हम दो प्रवाह मानते हैं। आर्य बाहर से आए, वे यहीं के थे। लेकिन यह समस्या विश्व के तीन-चौथाई देशों में है। प्रत्येक स्थान पर सेमेटिक, हेमेटिक शब्द प्रयुक्त किए जाते हैं। लेकिन चर्च, ब्रिटिश, पुर्तगाली, स्पेनिश एवं इतालवियों ने अमेरिका की मदद से फिर से इन प्रयासों को गति देनी शुरू की है। इसमें भारत की स्थिति को हम गहरे तक देख सकते हैं। भारत में यूरोपीय लोग किस तरह आए और उन्होंने किस तरह राज्य हथिया लिया, इस इतिहास को दोहराने की यहां आवश्यकता नहीं है। यूरोपीय लोगों ने यहां आने के बाद 200-300 वर्ष अपना डेरा जमाने में बिताए। यहां पक्के तौर पर सत्ता उनके हाथ में आने के बाद यहां सेमेटिक-हेमेटिक इतिहास को लादने का प्रयास शुरू हुआ। अश्वेत कहे जाने का क्रम आमतौर पर 19 वीं सदी के आरंभ से यानी ई. 1800 से शुरू हुआ। यह काम मिशनरियों एवं ब्रिटिश शासकों ने शुरू किया। मिशनरियों की तरफ से बिशप काल्डवेल और ब्रिटिश प्रशासकों की तरफ से फ्रान्सिस एलीस और एलेक्जेंडर कैम्पबेल इस काम में लगे। इसमें अहम बात यह है कि उपरोक्त दस मुद्दों वाले कार्यक्रम को उन्होंने हर 15 वर्ष बाद एक कदम आगे बढ़ाया।

इस बीच हेमेटिक-सेमेटिक परंपरा लादने के लिए यूरोप में 'वंशवाद' का सिक्का तैयार हो चुका था। भारतीयों को एक बात की गंभीरता से जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है कि इस सेमेटिक- हेमेटिक के लिए यूरोपीय लोगों ने भारत में जिस तरह से आर्य नामक काल्पनिक टोलियों को भेजा, उसी तरह उन्होंने पूरे विश्व में ऐसी काल्पनिक टोलियों को भेज दिया। उन्होंने अफ्रीका में काल्पनिक हेमेटिक टोलियां भेज दीं। दक्षिण पूर्व एशिया में कुछ हेमेटिक तथा कुछ सेमेटिक भेज दिए। इस बीच अमेरिका में भी सेंट थॉमस के जाने के बाद कुछ सेमेटिक एवं कुछ हेमेटिक टोलियां भेज दीं। तमिलनाडु में उन्होंने जिस तरह एक एक चरण पार किया, उसी तरह कहीं अंग्रेजों ने तो कहीं पुर्तगालियों ने वह काम किया। आज की स्थिति यह है, कि वंशवाद का नेशनल इंडेक्स सिद्धांत एवं हेमेटिक-सेमेटिक के रूप में फैलाया गया, इतिहास सिद्धांत, दोनों सिद्धांतों को झुठला दिया गया है। वंश सिद्धांत के स्थान पर 'वाय क्रोमोसोम सिद्धांत' है जो भारत के उत्तर में आर्यवंशीय तथा दक्षिण के अनार्यवंशीय लोगों को अलग नहीं मानता। उत्तर भारतीय और दक्षिण भारतीय अथवा आर्य-अनार्य की मुहर लगे हुए भारतीय को एक ही परंपरा का मान लिया गया है। इस तरह यहां

Scanned by CamScanner

की शैव परंपरा एवं तिरुवल्लुवर की संत परंपरा हेमेटिक मार्ग से बाइबिल से जोड़ दी गई है। भारतीय संतों की परंपरा एवं बाइबिल की परंपरा को अधिक कड़ाई से जोड़ने के लिए बाद में सेंट थॉमस का भी उपयोग किया गया है। लेकिन उसी थॉमस को दक्षिण अमेरिका में भी ले जाने से उसका झूठ स्पष्ट हो चुका है। अंग्रेजों के समय में सभी विश्वविद्यालय उन्हीं के संकेतों पर चलते थे इसलिए एवं बाद में आई हुई सरकारों ने उसी इतिहास को जारी रखा है। 21वीं सदी में इस विषय को केवल आर्य-अनार्य एवं तमिलनाडु में 200 वर्ष के सुनियोजित प्रयासों तक सीमित नहीं किया जा सकता। उसे प्रत्येक राज्य में अंग्रेजों के किए कामों से जोड़ा जाए एवं दूसरी तरफ सेमेटिक-हेमेटिक विवाद के कारण विभाजित विश्व की स्थिति से जोड़ा जाए तो यह अधिक प्रभावी रूप से सामने आएगा और विश्व को भी उसे स्वीकारना होगा।

यहां हमें यह ध्यान रखना होगा कि इन आक्रमणों के इतिहास का आकलन केवल वर्षों की गणना से नहीं होगा। उन्होंने आक्रमण कैसे किया, पराजय की संभावना दिखने पर उन्होंने कौन-सी आक्रमक भूमिका अख्तियार की और सारा माहौल बदल दिया, ये छोटी-छोटी बातें भी समझनी होंगी। इसी दृष्टि से ल्युथेरन पंथ के जिगेनबाल्ग, जेवियर, जेहादी आक्रमणों जैसी कुछ बातों पर भी हमें गौर करना चाहिए। अहमदशाह अब्दाली ल्युथेरन पंथ का हिस्सा नहीं था, लेकिन रणभूमि पर पराजय दिखते ही उसने सारे सैनिकों को रणभूमि में बैठकर अपने देवताओं की आराधना करने का आदेश दिया। उसके बाद उसने पुनः आक्रमक पद्धति से लड़ाई की और विजय प्राप्त की। अतः आक्रमणकारी चाहे ल्यूथेरियन हों अथवा अब्दाली, अगर वे हमारी मातृभूमि पर आक्रमण कर रहे हों तो हमें योगयुक्त तपश्चर्या से उन्हें उत्तर देने के काबिल होना चाहिए। यह स्पष्ट हो चुका है कि हरेक मिशनरी अपनी-अपनी पद्धति से इस घटक का प्रयोग करता है। जेविअर द्वारा धर्मांतरित किए गए लोगों की संख्या कुछ लाख मानी जाती है। इसकी तैयारी करने के लिए वह फांसी की सजा सुनाए गए कैदियों में बैठा करता था। ल्यूथेरन पंथ का जिगेन्बाल्ग 23 वर्ष की उम्र में भारत में आया और 37 की उम्र में उसका निधन हुआ। लेकिन सिर्फ 14 वर्षों के अरसे में उसने जो काम किया, उसे केवल वर्षों की गणना एवं धर्मांतरण के आंकड़ों की भाषा में नहीं समझा जा सकता। वह यूरोप की छपाई कला को भारत लाया था जिसके सहारे केवल बाइबिल को प्रकाशित किया जाता था और

Scanned by CamScanner

अन्य कोई सामग्री न छपे, इसका ध्यान रखा जाता था।

भावी तैयारियां और अतीत के दृष्टांत

भारत के अन्य राज्यों और तमिलनाडु में चलती रहीं मिशनरियों की गतिविधियों में महत्वपूर्ण फर्क यह है कि 300 वर्षों तक इस प्रदेश को ईसाई देश मानकर ही सारी बातें की गईं। आज दुनिया में दो अरब ईसाई जनसंख्या को तीन अरब में परिवर्तित करने की अतिविशाल मुहिम जारी है। अगले कुछ वर्षों में चीन और भारत की 25-25 करोड़ ईसाई आबादी का लक्ष्य रखकर काम किया जा रहा है। इसलिए इन संस्थाओं ने 200-300 वर्षों तक कैसे काम किया था, इसका काफी महत्व है। शुरू में यहां के समाज की प्रशंसा, बाद में उनमें दोष निकालना और फिर आक्रमक भाषा, यह क्रम आज भी ज्यों का त्यों है। हमारे यहां आज भी कुछ निधर्मी विचारकों को लगता है कि उन्होंने धर्मांतरण किया तो क्या बिगड़ता है, प्रत्येक व्यक्ति को अपनी मर्जी के अनुसार अपने उपासना पंथ को अपनाने का अधिकार है। ऐसे लोगों को दो प्रश्नों के उत्तर देना आवश्यक है। एक तो यह कि यह सच है कि इसी धर्मांतरण के आधार पर उन्होंने भारत तथा विश्व में अन्यत्र भी इसके देशों को अपना गुलाम बनाया। हमें यह मानना होगा कि 500 वर्षों से की गई लूट हमारे पुरखों की खेती तथा उद्यम से की गई खून-पसीने की कमाई थी। भारत के संदर्भ में तो यह समस्या और भी गंभीर है क्योंकि भारत पर विदेशी आक्रमण एक हजार वर्ष पुराना है। इस दौरान आक्रांताओं ने हमें उनके विरोध में खड़े रहने का प्रयास ही नहीं करने दिया। जिन्होंने प्रयास किया, उनका अंत भगत सिंह सरीखा हुआ। एक हजार वर्षों की गुलामी के कारण हुए उनके विरोध में किसी शक्ति को संगठित नहीं होने दिया। सो तीन-तीन आतंकवादी संगठनों के कारनामों को एकत्र करना पाश्चात्य संस्थांओं का इक्कीसवीं सदी का स्वरूप है, लेकिन इस विषय का आरंभ उन्होंने अठारहवीं सदी में ही कर दिया था। आज भी बदस्तूर जारी उनकी गतिविधियां इसी सिद्धांत पर टिकी हैं कि बाईबल से ही पूरी दुनिया का आरंभ हुआ है और बाईबल से ईसाइयों को पूरे विश्व की संपदा को लूटने का अधिकार मिला है।

अतः इन आतंकियों से लड़ते समय हमें किस तरह की भूमिका लेनी होगी, इस बारे में छत्रपति शिवाजी के समकालीन सेनानी प्रतापराव गुर्जर का उदाहरण याद रखना होगा। प्रतापराव गुर्जर युद्धनीति में अत्यंत माहिर

Scanned by CamScanner

समझे जाते थे। सन् 1674 में शिवाजी महाराज ने उन्हें एक मुहिम में बहलोल खान पर धावा बोलने भेजा। नेसरी में हुई लड़ाई में प्रतापराव गुर्जर ने घेरा तोड़कर उसे पराजित भी किया, लेकिन उसके द्वारा दया याचना करने के बाद उसे छोड़ दिया। यह बात जब शिवाजी को पता चली तब उन्होंने प्रतापराव गुर्जर से कहा कि तुमने गलती की है। बहलोल खान फिर से आक्रमण करेगा, यह मत भूलो, और वही हुआ। वह अधिक तैयारी के साथ लौटा। प्रतापराव गुर्जर ने प्रत्याक्रमण किया, वह इतिहास में प्रसिद्ध है। बहलोल खान की 15,000 सेना के सामने प्रतापराव की संख्या कम थी। प्रतापराव जिस शूरता के साथ लड़े, उसकी तारीफ खुद बहलोल खान ने भी की। हर तरफ से घिरे हुए प्रतापराव से बहलोल खान ने पूछा, पटेल, अब क्या करोगे। तब प्रतापराव गुर्जर ने उत्तर दिया, बचेंगे तो और भी लड़ेंगे। उनका उत्तर इतिहास में प्रसिद्ध है। इस पर कवि कुसुमाग्रज द्वारा लिखित एक कविता है वेडात मराठे वीर दौडले सात। यह शूरता की अनुभूति कराने वाली अद्‌भुत घटना है, लेकिन 11वीं सदी के गजनी से लेकर 21वीं सदी के गजनियों तक क्षमाशील होने की इस परंपरा पर पुनर्विचार करने की भी यही उचित वेला है। ■

Scanned by CamScanner